।। श्री गोकुलेशो जयति ।।

।। श्री रमणेशो जयति ।।

श्री कल्लोल जी ग्रन्थ

[illegible] चतुर्दश [illegible]श

(श्रीमद् गोकुलेश लीलायां रसाब्धी सुधासिंधौ)







-: मूल :-

श्री कल्याण भट्ट मठपति जी

-: टीकाकार :-

पंडित लोकनाथ जी (गोकुलिया)

लैया वासी

श्री महामहोत्सव संवत् 2059

कल्लोलजी चौदहवां

श्री कल्लोलजी चौदहवां

अनुक्रमणिका

दोष दूर होते हैं तो इन भक्तन के दोष कैसे दूर नहीं होते ? बंदर के संग लीला करने की इच्छा और कलियुग सतयुग द्वापर त्रेता युग की सब बात यहां समझाई है ॥

तरंग--७ परस्पर प्रेम प्रकार निरूपक स्तरंग ॥ २२

प्रभु और भक्तन कुं परस्पर प्रेम कुं बढ़े है याकुं प्रकार कह्यो है ॥ भगवान कुं तथा भगवदीय कुं आपस में शील एक समान है यासुं आपस में प्रेम है ॥ फिर श्री कल्याण भट्टजी ने निवेदन कियो कि हे महाप्रभो विनकुं समानशील कैसे है तब आज्ञा करी कि वा दोनों कुं ही अपने मित्र संग द्रोह और शत्रु संग स्नेह है यह स्वभाव दोनों कुं ही एक है ॥ भगवान के आत्मा और भक्तन के आत्मा से यह विलक्षणता समझाई है ॥

तरंग--८ लौकिक विषय निरूपक स्तरंगः ॥ २३

लोकातीत (कृशरा) खीचड़ी कुं वर्णन कियो है ॥ जे अत्यन्त ही उत्तम भगवदीय है जे श्रीमत् पुरुषोत्तम भगवान कि श्री स्वामिनीजी के हु स्वरूप कुं जानें हैं कि भाव पूर्वक अनुभव हु करें हैं ऐसे उत्तम भगवदीयन की हु लौकिक विषय में आशक्ति देखवे में आवे है सो कैसे योग्य है ? महाप्रभुजी वाकुं कैसे सहन करें हैं । वाकुं कैसे नहीं निवारण करें हैं ॥ महाप्रभु आज्ञा करें हैं कि विषयन में आसक्ति प्रभुन की इच्छा सुं ही है सो योग्य है ॥ फिर विज्ञापना करें हैं ऐसो हित विनकुं काहा है जाके अर्थ वा विषयासक्ति कुं प्रभु नहीं निवारें हैं ॥ तब सगरे लौकिक अर्थ सुं निवृत्त भयो हु मेरे समान और कोई नहीं है यासुं मोकुं कर्तव्य नहीं या प्रकार अहंकार बढ जाय है तासुं अलौकिक स्वामिनीजी को दृष्टांत कह्यो है वहां श्रीजी चावर हैं स्वामिनीजी मूंग हैं शीतल जल स्नेह है लौंन तथा हींग कुं वगार को आर्द्रक डारवे अर्थ श्री महाप्रभुजी वा भगवदीय को लौकिक में आशक्ति राखें हैं ॥

है उसको विस्तार सों कह्यो है ॥

तरंग--१२ लीला कथनमय पानक निरूपक तरंगः ॥ ३४

अलौकिक पनो मनोहर पनो कह्यो है ॥ प्रभुन के विहार की वार्ता में प्रभुन के कितनेक श्रेष्ठ भक्तन को पूरण रस को स्वाद होय है कितनेक कुं वैसो नहीं होय है वामें कारण कहा है ॥ आज्ञा करत हैं कि श्री पुरुषोत्तम की लीला कुं वर्णन रूप अद्‌भुत पानक कि पना रूप विराजमान हैं सो सगरे तापन कुं निवर्त करवे वारो है परमानंद को देवे वारो है ॥ ऐसे वा पानक में श्री गोकुलाधीशजी उज्वल मिसरी रूप हैं तथा और श्री प्रभुन कुं प्रियागण हैं विनके संग प्रभुन कुं संयोग है सो उज्वल जल है ॥ वियोग है सो मिरची को चूरण है और जे क्षण क्षण में वे वे व्यभिचार भाव उदय होय हैं वे वरास इलायची कुं चूरण हैं ॥ श्रोता भक्त पान करवे वारो है श्रवण की इच्छा तृषा है ॥ पात्र तो उज्वल शुद्ध हृदय है ॥ कहवे वारो परोसवे वारो है ॥ प्रभु की कृपा सों पात्र की सुन्दरता प्रकट करवे वारो स्नेह है ॥ कहेनो है सो परोसनो है ॥ जिव्हा है सो हस्त है ॥ एकांत है सो घर है अन्य आलाप कुं जो निवारण है सो एकांत उपवन है ॥ भली प्रकार सुननो है सो पान है ॥ सुनवे में परम ताप है सो ग्रीष्म ऋतु है ॥ इतनी संपदा सिद्ध होय तब ही पना पूर्ण स्वाद कुं आस्वाद कुं देवे है ॥ प्रभुन ने आज्ञा किये पान कुं जो विचारे है सो महाप्रभु की कथा में बिना यत्न के पूर्ण आस्वाद कुं प्राप्त होय है ॥

तरंग--१३ चित्त भेद निरूपक तरंगः ॥ ३५

चित्त के मनोहर भेद कहे हैं ॥ विज्ञापना करत हैं कि प्रभुन के दर्शन सुं ही कि वार्ता में सेवा में कि कथा में वा प्रसंग में कोई कुं रस विशेष अनुभव होय है कोई कों थोरो कोईकुं विरस होय है यामें कारण कहा है ॥ जाकु जैसो चित्त होय वाकुं वैसो रस प्रतीत होय है ॥ चित्त के प्रकार, आकाश

चित्त, वज्र चित्त, लोह चित्त, पत्थर चित्त, सुवर्ण चित्त और लाक्षा चित्त हैं ॥ श्री महाप्रभु ऐसे चित्त के विवरण कहे हैं ॥

तरंग--१४ श्री पुरुषोत्तम प्राप्ति निरूपक तरंगः ॥ ३८

पूर्ण पुरुषोत्तम के ही चरण जानो कह्यो है ॥ जब परमेश्वर स्वयं कृपा सुं अपने जा स्वरूप कुं जीवन के मंगल अर्थ प्रगट करें हैं तब यदि जीव वा स्वरूप में प्रपन्न होय तो उच्छले महाभाग्य जानने । सो प्रगट भयो स्वरूप ही जाके जितने हित कुं करवे की इच्छा करें हैं वाके वितने हित कुं करें हैं ॥ जीवन कुं जितनो हित होय है वितनो सगरो ही अपने वा स्वरूप के हाथ में ही राखें हैं ॥ वा प्रकट स्वरूप कुं छांड़के अप्रकट के पीछे दौड़े हैं विनने दोनों गमाय दीये हैं ॥ जा जन सुन्दर सामग्री सुं भरे परोसे पात्र कुं छांड़के खाली पात्र लिये दौड़े है वाके हाथ सों खाली पात्र हु नहीं मिले है कि परोसवे वारे के निरादर करवे सुं सो प्रथम को परोस्यो पात्र हु नहीं मिले है ॥ सो उभय भ्रष्ट होय है ॥ जैसे रावण महामुनी गणन सुं प्रशंसा योग्य पुलस्त को पौत्र हु हतो तथा सगरे वेदन के अर्थ कुं हु जानतो परमेश्वर के अप्रकट स्वरूप कुं हु भजतो तथापि प्रकट स्व रूप रामचन्द्र सो विमुख हतो सो ताकी निंदा होय है उनके छोटे भाई विभीषण प्रकट स्व रूप रामचन्द्र में प्रपन्न हतो सो भक्तराज की ऐसे स्तुती होय है ॥ वैसे और ही दृष्टांत श्रीकृष्ण के भक्त और जो श्रीकृष्ण के प्रगट स्वरूप से विमुख हते विनके दिये हैं ॥

तरंग--१५ श्री पुरुषोत्तम प्राप्ति क्रम विशेष निरूपक तरंगः ॥ ४०

पुरुषोत्तम की प्राप्ति में मनोहर क्रम कहे हैं ॥ विज्ञापना करे है भगवदीयन कुं का क्रम सुं प्रभुन की प्राप्ति होय है ॥ श्री महाप्रभुजी आज्ञा करत भये हैं जब प्राणनाथ श्री महाप्रभुजी अपनी भक्त सुन्दरी सुं रस के प्रकार कुं प्रार्थना करें हैं तब वा भगवदीय भक्त सुन्दरी कुं प्रभुन में परिपक्व सर्वात्मभाव

होय है तब सो श्री महाप्रभुजी वा प्रिया के प्रति अपनी कृपा सुं अपनी रस लीला के योग्य अलौकिक महा रसमय वैसो देह सिद्ध करें हैं तब वाके देह इन्द्रीय प्राण अन्तःकरण कि और हु सब प्रभुन के निवास योग्य आनन्दमय ही होय जाय है तब वाके संग प्रीति में रस रीति सुं रमण करवे अर्थ प्राणनाथ के वे महा मनोरथ ही प्रकट होय हैं ।। वा प्रियाजी के संग सदैव ही रस रीति सुं बाहिर भीतर रमण करें हैं याकुं पुष्टिमार्ग में परम फल कहते हैं चतुर पुरुष याकुं पुरुषोत्तम प्राप्ति कहें हैं ।।

तरंग--१६ श्री भगवदीयानुसरण निरूपक तरंगः ।। ४२

निष्कपट होयके भक्त को अनुसरण करनो कह्यो है ।। विज्ञापना भगवदीय को प्रभु की प्राप्ति वेग कैसे होय तब आज्ञा करें हैं यदि यह भगवदीयन के अनुसरण कुं करें तो निश्चय सुं प्रायः विनके अनुसरण कुं यह नहीं करें हैं यासुं वामें विलंब होय है ।। श्री कल्याणभट्टजी ने फेर विज्ञापना करी सगरे ही भगवदीय तो प्रायः इनके अनुसरण कुं करें हैं तोहू इनकूं भगवान की वेग प्राप्ति क्यों नहीं होय है तब आज्ञा करते भये हैं कि यह तो निश्चय सुं ही भगवदीयन के अनुसरण कुं नहीं करें हैं यदि करें तो वेग ही वा प्रभु कुं प्राप्त होय हैं ।। यह जो आपस में प्रणाम सेवा दान मान प्रेम उपकार कि और और जो हू करें हैं याकुं भगवदीय अनुसरण नहीं माननो यह तो देवे लेवे कुं लौकिक व्यवहार विशेष है ।। प्रणाम आदि करनो जो है वाको विशेष करके श्री महाप्रभुन ने दिखायो है ।।

तरंग--१७ सावधान व स्थिति निरूपक तरंगः ।। ४५

हित करवे वारी सावधानता को दिखाई है ।। विज्ञापना भगवदीयन कुं प्रभुन की प्राप्ति वेग कैसे होय ।। तब आज्ञा करें हैं यदि भगवदीय को भाव निश्चल हो तब तब खंडित न होय तो तब सर्व प्रकार सुं वेग ही प्रभुन की प्राप्ति होय

।। तब श्री कल्याणभट्टजी फेर पूछ्यो या भगवदीय कुं भाव खंडित का कारण सुं होय है ।। तब तब सावधान न होयवे सुं भगवदीय कुं भाव खंडित होय है ।। तब विज्ञापना करें हैं कि सो भगवदीय कब कब वेग सावधान होय जासुं वाकुं भाव खंडित न होय ।। जब प्रभु कोउ कूं अपने सुं विशेष कि अपने समान ठहरावें तब भगवदीय सावधान अपने भाव कुं प्रभुन में ही राखे अनत नहीं जायवे देवे ।। कबहु वसुदेव को कबहु देवकी कबहु पांडवादिन कबहु द्रौपदी कबहु विदुर कबहु दारुक कबहु उग्रसेन कबहु कुंती कबहु नारद कबहु व्यास कबहु द्वारिकावासी महा पटरानी कुं हु भाव खंडित भयो है ।। यासुं भगवदीय सदा ही सावधान रहे यदि याकुं प्रभुन में भाव सदैव ही स्थिर रहेगो तो याके सगरे ही मनोरथ सिद्ध होयगो ।। एक केवल मुख्य भक्त गोपी जनन कुं ही भाव कबहु खंडित नहीं भयो है ।।

तरंग--१८ आलस्यादि दोष निरूपक तरंगः ।। ४७

विज्ञापना भगवदीयन में सगरे ही गुण निवास करें हैं कि कोउ दोष हु विनमें रहें हैं ।। आज्ञा -- भगवदीयन में प्रायः गुण ही हैं परन्तु एक दोष विनकुं सहसा हीं छांडे है और वे हु वाकुं नहीं त्याग करें हैं सो दोष हु आलस्यादि है यदि भगवदीय वा दोष कुं त्याग करें तो अवश्य ही पुरुषोत्तम कुं प्राप्त ही होय है ।। जे तो प्रतिष्ठा वारे हैं तथा जे प्रतिष्ठा के आश्रय सुं जावें हैं वे तो वा प्रभु की प्राप्ति सुं ठगे ही हैं वैसे के वैसे ही रहे हैं ।। और जो भगवदीय धर्म सुं कि धन सुं कि अथवा स्त्री पुत्र घर व्यवहार भ्राता बांधव कुटुंब मित्रन सुं कि प्रतिष्ठा अहंकार कि लौकिक इच्छा सुं कि प्रतिष्ठा आदि और हु वैसे प्रतिबंधन कुं पायके वा आलस्यादि कुं छांड़के वा मार्ग में ही रहेगो सो तो अन्याश्रय नाम वारी सांकल सुं दृढ़ बांध्यो भयो ही अनंत प्रकार के दुःखन कुं ही प्राप्त होय है ।।

तरंग--१९ उत्तम भगवदीय लक्षण निरूपक तरंगः ॥ ४८

विज्ञापना -- का भगवदीय कुं पुरुषोत्तम की प्राप्ति वेग होय ॥ आज्ञा -- उत्तम भगवदीय कुं पुरुषोत्तम की प्राप्ति वेग होय है ॥ विज्ञापना -- उत्तम भगवदीय तो बहोत हैं परन्तु विनकुं तो पुरुषोत्तम की प्राप्ति प्रतीत नहीं होय है ॥ आज्ञा -- यह उत्तम कहां हैं उत्तम तो अत्यन्त दुर्ल्लभ है ॥ तासुं अमुल्य मणि जहां कहां नहीं होय है जिनकुं तुम उत्तम जानो हो स्वयं ही महाप्रभुन में सगरे संबंधी सर्व आत्मा निवेदन कियो है तथा श्री आपके दर्शन में तत्पर है कि जिनकुं श्री आपकुं नाम सेवा हु प्राप्त भई है सदैव ही श्री आपकी उपासना करें हैं हौं तो विनकुं ही उत्तम जानुं हुं ॥ वे कैसे उत्तम नहीं हैं हे प्राणनाथ जगत्प्रभो मोकुं यह आप आज्ञा करें ॥ तब आज्ञा करें हैं उत्तम भगवदीयन के लक्षण प्रतीत होय, वाकुं उत्तम भगवदी जाननो यासुं जिनमें वे लक्षण प्रतीत न होय वे कैसे उत्तम भगवदीय जाने जाय ॥ विज्ञापना करी उत्तम भगवदीय कुं लक्षण होय सो मोकुं आज्ञा करिये ॥ आज्ञा करें हैं -- जो भगवदीय कुं उत्तम जाने तथा अभगवदीय कुं उत्तम भगवदी न जाने सो उत्तम भगवदीय है ॥ अपने कुं उत्तम जाने सो अधमन सुं हु अधम साधारण जीव है ॥

तरंग--२० भगवदीय रुच्च रुची निरूपक तरंगः ॥ ५०

विज्ञापना -- भगवदीयन के सगरे ही गुण रूप कर्मादि प्रभुन कुं चुचे हैं कि विनमें कछु हु नहीं रुचे हैं तथा भगवान के हु सगरे गुण रूप लीलादिक भक्तन कुं रुचें हैं कि विनमें कछु नहीं रुचें हैं ॥ आज्ञा -- भक्तन के सगरे ही गुण रूपादिक प्रभुन कुं रुचें हैं तथा वैसे प्रभुन के हु सगरे गुण रूपादि लीलादिक भक्तन कुं रुचें ही हैं ॥ परन्तु वा भक्तन कुं प्रेम तो प्रभुन कुं अत्यन्त ही रुचे है ॥

तरंग--२१ श्रीमुख श्रीमदुक्ति मुक्तामये प्रेम पराक्रम निरूपक तरंगः ॥ ५१

आज्ञा करत भये हैं ॥ श्रीमद् गोकुल सुन्दरीन कुं जो प्रिय

श्री पुरुषोत्तम श्रीजी हैं सो जासुं वैसी मूलता कि लीला विलास कि किणका सुं ही तीनों जगत की उत्पत्ति स्थिति प्रलय कुं करें हैं तासुं सबन सुं प्रबल है ॥ तथा जासुं वा श्रीजी की कृपा कुं विशेष पात्र है कि सगरे भक्त समुह हु जाके चरण कमल संबंधी पराग के किणका कुं हु प्रणाम करें हैं तासुं ऐसी श्री परकीया स्वामिनीजी सबन सुं ही प्रबल हैं ॥ श्री स्वामिनीजी के संग चार लीला को प्रसंगों का विस्तार है ॥

तरंग--२२ भक्तोपकाराधिक्य तरंगः ॥ ५७

विज्ञापना की प्रभुन की प्राप्ति में भगवदीयन कुं विलंब का कारण सुं होय है ॥ आज्ञा -- यदि भगवदीयन के किये उपकार कुं भगवदीय बहुत मानें और गमावे नहीं तो अवश्य ही प्रभुन कुं प्राप्त होय जाय परन्तु वे तो वा उपकार को बहुत मानें नहीं हैं और लोप ही करें हैं कि जानें हु नहीं हैं तासुं विनकूं वा प्राप्ति में विलंब हु होय है ॥ विज्ञापना -- ऐसो को उपकार है जाकुं यह नहीं मानें हैं उलटो लोप करें हैं ॥ आज्ञा -- भगवदीयन सुं लौकिक शरीर स्त्री आदि कुं कि अलौकिक बुद्धि आदिकन कुं जो लेनो है सो लेवे वारेन कुं उपकार है ॥ आज्ञा -- सो दान है आदान में पर्यवासन है कि देयवो है सो लेयवे में ही फल है और लेयवो है देयवे में पर्यवसान है कि फल है ॥ तामें दान है सो उपकार नहीं है आदान है कि लेयवो है सो उपकार है ॥ जासुं जो भगवदीय भगवदीयन के प्रति जो कुछ लौकिक अत्यन्त बहुत हु वस्तु दान करे है सो वे दाता भगवदी वा लेवे वारे भगवदीय सुं कि प्रभुन सुं वा दान किये वस्तु सुं अत्यन्त अधिक सुं हु अधिक प्राप्त होय है तासुं सो दान कि देनो तो लेयवे में ही फले है ॥ ज्ञान तो प्रभुन ने दान करी अलौकिक दृष्टि रहित होयवे सुं ही कि लेयवे आदि की विशेषता के अज्ञान सुं ही है तासुं श्री गोकुलेश महाप्रभुन की

प्राप्ति में विलंब होय है ॥

तरंग--२३ कृपा स्नेह पराक्रम निरूपक तरंगः ॥ ५९

विज्ञापना -- श्री मुख्य स्वामिनीजी के संग भगवान पुरुषोत्तम श्री गोकुलपती कुं वियोग कैसे संभवे है जा वियोग में श्री मुख्य स्वामिनीजी कुं बड़े दुःखन कुं अनुभव होय है वाकुं काहे कुं उतपन्न होयवे देवे है ॥ आज्ञा :-- श्री परमेश्वर श्रीजी मुख्य धर्मी हैं सो यह सबन सुं ही प्रबल हैं और श्री मुख्य स्वामिनीजी श्रीजी के भक्तन में मुख्य हैं तासुं और सबन सुं ही अत्यन्त प्रबल हैं ॥ जब यह प्रियाप्रिय दोनों श्रृंगार रस लीला करवे कुं विचार्यो तब दोनों के मन में ही संदेह भयो कि जब हम दोनों रस के वस होय जायगे तब हम दोनों के स्वरूप की रक्षा को करेगो अथवा रस लीला में जो कछु चाहिये सो को लावेगो ॥ प्राणनाथ और प्राण स्वामिनीजी के या प्रकार के विचार कुं जानके दोनों प्रियाप्रिय के सगरे ही धर्म मूर्तिमान ही वहां पधारके दंडवत प्रणाम करके हाथन कुं बांधके विज्ञापना करते भये हैं ॥ हे महाप्रभो ! हम सगरे ही आप दोनों प्रियाप्रिय के दास हैं अब जा प्रकार सुं श्री आप आज्ञा करेंगे हम वा प्रकार सुं ही सेवा करेंगे ॥ या प्रकार धर्मन की विज्ञापना कुं सुनके तब प्राणनाथजी ने सगरे अपने धर्मन में मुख्य जो मुख्य स्वामिनी पर अपनी कृपा है वा कृपा कुं आगे बुलायो और मुख्य स्वामिनीजी तो अपने सब धर्मन में मुख्य जो अपने प्राणनाथ में स्नेह है वाकुं आगे बुलायो तब श्रीजी अपने सेवा को अधिकार वा कृपा कुं सोंपके वाकुं कृतार्थ कियो ॥ प्रियतम ने अपने सगरे धर्म वा कृपा के ही आधीन कियो और प्रियाजी ने हु और सगरे अपने धर्म वा स्नेह के आधीन किये ॥ और सो प्रियाप्रिय तो श्रृंगार रस लीला में ही प्रवृत्त भये हैं ॥ जब प्रियाप्रिय में परमानंदमय संयोग रस अत्यन्त बढवे लग्यो तब वा कृपा ने ऐसे विचार्यो कि प्राणनाथ ने

मोकुं सब प्रकार की सेवा सोंपी है तामें अब दोनों प्रियाप्रिय में संयोग रस अत्यन्त बढ्यो है ऐसे बढ़त ही जब दोनों के भीतर बाहिर एक रस ही व्याप्त होय जायगो तब दोनों की एकता सिद्ध करत स्वरूप कुं ही अंतरध्यान कर देगो ।। जैसे बाहिर भीतर अत्यन्त बढ़ी सरदी कमल आदि के स्वरूप अंतरध्यान करे है ।। या प्रकार स्नेह हु प्रेम सुं विचारतो भयो है कि श्री मुख्य स्वामिनीजी ने मोकुं सगरी सेवा कुं अधिकार सोंप्यो है ।। ऐसे सो दोनों कृपा और स्नेह मिलके संयोग कुं क्रम सुं दूर कर देते भये हैं और वाके स्थल में विप्रयोग कुं स्थिर कर देते भये हैं ।। और जब तो सो विप्रयोग क्रम सुं अत्यन्त बढ़वे लग्यो तब कृपा ने प्रेम सुं ऐसे विचार्यो कि ऐसे बढ़ रह्यो यह विप्रयोग जब प्रियाप्रिय के बाहिर भीतर पसर जायगो तब अपनी ज्वाला सुं दोनों के स्वरूप कुं ही अंतरध्यान कर देवेंगो जैसे बाहिर भीतर बढ्यो अग्नि काष्ट के स्वरूप कुं छिपाय देवे है ।। और या प्रकार स्नेह ने हु ऐसे विचार कियो ।। तब वे दोनों कृपा और स्नेह मिलके क्रम सुं विप्रयोग कुं दूर कर देते भये हैं ।। तासुं वा दोनों प्रियाप्रिय के स्वरूप रक्षा रूप सेवा के लिये तत्पर जे कृपा और स्नेह है सो संयोग वियोग के मध्य में जाकुं अत्यन्त बढ़तो देखें हैं तब क्रम सुं वाकुं दूर करके वाके ठिकाने दूसरे कुं स्थिर करें हैं ।। जासुं प्राणनाथ तथा प्राण स्वामिनीजी ने वा कृपा स्नेह कुं ऐसी अपनी सेवा को अधिकार सोंप्यो है ।।

तरंग--२४ श्री मुख्य स्वामिनी गुण निरूपक तरंगः ।। ६१

विज्ञापना -- उतकर्ष कि प्रकाश करवे वारो जो वचन है सो स्तुति है ।। वैसे वेदन सुं तुम समर्थ हो इत्यादि कथन स्तुति है ।। वैसी स्तुति है सो अत्यन्त स्तुति है सो तो पुरुषोत्तम श्री गोकुलाधीश के अवतारन में हु घटे है ।। श्रीमद् गोकुल प्राणनाथ प्रभुन में सो निंदा है जासुं सो सगरी स्तुति मिलके

हु श्रीमद् गोकुल प्रभुन के श्री चरणारविन्द रेणु कण सुं ही अत्यन्त ही अपकृष्ट है जासुं सो महाप्रभुन के उत्कर्ष कुं प्रकश नहीं कर सके है ।। जैसे ब्राह्मण श्रेष्ठ को तुम चांडाल सुं पवित्र हो या प्रकार सुं कहेनो स्तुति नहीं है ।। अथवा चक्रवर्ती को तुम गामडे के राजा सुं बड़े हो यह कहनो स्तुति नहीं है सो तो निन्दा है ।। तब श्रीमद् गोकुलेश प्रभुन की स्तुति कहा है तथा अत्यन्त स्तुति कहा है ? आज्ञा करत भये हैं :-- कि श्री गोकुलेश प्रभुन ने श्री मुख्य स्वामिनीजी कुं जो अपने सुं हु विशेष कियो है वाकुं जो वर्णन प्रकाश करनो है सो ही वा प्रभुन की स्तुति है कि अत्यन्त स्तुति है ।। श्री पुरुषोत्तम सर्व समर्थ हु हैं तो हु और पुरुषोत्तम कुं बनायवे में समर्थ नहीं हैं ।। ऐसो हु होयके सो महाप्रभुजी जो वा श्री मुख्य स्वामिनीजी कुं सबन सुं विशेष कि अपने सुं हु विशेष कियो है सो यह महाप्रभुन की परम उत्कृष्टता है या उत्कर्ष कुं प्रकाश करनो ही स्तुति है कि अत्यन्त स्तुति होय है ।। तब विज्ञापना :-- प्रभुन में अपने सुं ही विशेष कर दियो है सो गुण मेरे प्रति आज्ञा करो ।। आज्ञा :-- पुरुषोत्तम सर्व प्रकार सुं ही वाके आधीन हैं और पुरुषोत्तम की सो सर्वस्व है तथा पुरुषोत्तम ही वाके सर्वस्व हैं तथा प्राण रूप हैं तासुं बहुत प्रकार के गुण जे पुरुषोत्तम में हु नहीं हैं वा मुख्य स्वामिनीजी में अत्यन्त ही वे गुण हैं तासुं पुरुषोत्तम ने वाकुं अपने सुं ही महा उत्कृष्ट कियो है ।।

तरंग--२५ रुची बीज निरूपक स्तरंगः ।। ६३

विज्ञापना -- श्री गोकुलेश प्रभुन की गुण स्वरूप लीला की चर्चा कितनेक जीवन कुं का कारण सुं नहीं रुचे है ।। अवतारन की चर्चा तो रुचे है औरन की तो अत्यन्त ही रुचे है तामें कारण कहा है ? आज्ञा -- पुरुषोत्तम श्री गोकुलेश प्रभुन को जो प्रागट्य है सो तो कबहु ही होय है ।। तासुं मुनीजन, ब्रह्मा वेदादि नहीं जानें हैं -- अभ्यासनहीं है तासुं

वर्णन नहीं कियो है और अवतारन को प्रागट्य बहुत बेर ही होय है तासुं विशेष जानें हैं ॥ जासुं अभ्यास विशेष है तासुं वर्णन विशेष विनको ही करें हैं ॥ जैसे घोड़ा कुं गुड़ मिसरी नहीं रुचे है सो कड़वी तीखी मिरची तो नहीं है किन्तु अभ्यास नहीं है और घास रुचे है सो मीठो तो नहीं है किन्तु रातदिन अभ्यास हु वाकुं है तासुं रुचे है ॥ श्री गोकुलेश प्रभुन ने अपने स्वरूप में अरुची कुं कारण अनभ्यास बतायो है ॥

तरंग--२६ सद् उत्कर्ष निरूपक स्तरंगः ॥ ६४

विज्ञापना :-- श्रीजी का कारण सुं सबन सुं उत्कृष्ट हैं ॥ आज्ञा -- श्रीजी जासुं वा वा सर्वोत्कृष्ट वा वा अर्थ के भोक्ता हैं तासुं सर्वोत्कृष्ट हैं ॥ तब विज्ञापना करी :-- वे सर्वोत्कृष्ट अर्थ कौन से हैं ? आज्ञा :-- वे वे स्वामिनीजी की मुख्य स्वामिनीजी हैं वे सर्वोत्कृष्ट हैं वा स्वामिनीजी में हू प्रकाशमान परकीया भाव वामें हु कबहु स्वकीया भाव प्रकाशमान है ॥ श्री गोकुलाधीश प्रभुन ने अन्य ब्याज सुं अपनो रसात्मक स्वरूप कुं वर्णन कियो है ॥

तरंग--२७ जीव कृतार्थनो पाय स्तरंगः ॥ ६९

विज्ञापना :-- कलियुग में भयो मो सदृश महापापी यह दुष्ट जीव कब कृतार्थ होय ? आज्ञा :-- जब वैसो हु जीव शुद्ध पुष्टिमार्ग के योग्य सर्वोत्तम भगवदीय हो तब कृतार्थ होय है ॥ तब विज्ञापना करी -- कब कैसे होय ? तब आज्ञा करी -- जब श्री पुरुषोत्तम वाकुं पुष्टिमार्गीय भाव सुं वरें हैं ॥ जब श्री मुख्य स्वामिनीजी की सखीन की कि दासीन की कोउ दास के ऊपर श्रीमत्त चरण कमलों की रज अथवा दृष्टि परे है ॥ जब श्री मुख्य स्वामिनीजी की सखी सहेली अपने अपने घर में महोत्सव करें हैं तामें नाचें हैं को गान करें हैं कि महा प्रसाद लेवें हैं कि लिवावें हैं कि वहां वहां गिरें हैं सुगंधी चंदन चूर्ण पुष्पादि उठायके बाहिर डारवे पधारें हैं तब

विनकी सो चरणरज की कृपा दृष्टि वा दास के ऊपर परे है ।। विज्ञापना -- कब महोत्सव करें हैं ? आज्ञा -- जब श्री मुख्य स्वामिनीजी अपने कुं सर्व प्रकार सुं ही कृतार्थ मानें हैं तब वे महोत्सव करें हैं ।। यह प्रभु श्री गोकुलवल्लभ या माहा श्रृंगार रस सार सागर स्वरूप सुं जा जीव कुं वरें हैं सोई जीव ही वैसो भगवदीय होय है ।। कि यह रस लीला योग्य देह इन्द्रीय अंतःकरण सर्वात्म भावादि कुं पायके वा श्रीजी की लीला में प्रवेश कुं प्राप्त होय है ।। प्रभुन कुं एक ओर स्नेहात्मक स्वरूप है या स्वरूप सुं जाकुं वरें हैं सो जीव शुद्ध पुष्टिमार्गीय शुद्ध स्नेही होयके स्नेह योग्य लीलान में प्रवेश कुं प्राप्त होय है ।। एक और हु ऐश्वर्यात्मक स्वरूप है वा स्वरूप सुं जाकुं वरें हैं सो जीव शुद्ध पुष्टिमार्गीय सर्वोत्तम भगवदीय दासयोग्य देहादि कुं पायके सुख समुद्र में प्रवेश कुं प्राप्त होय है ।। वैसे तीनों स्वरूप एक ही हैं तथापि ऐश्वर्यात्मक जो रूप है सो स्नेहात्मक स्वरूप कुं आवरण हैं ।। स्नेहात्मक स्वरूप है सो वैसे रसात्मक स्वरूप को आवरण है ।। रसात्मक स्वरूप है सो अन्य सब रूपन सुं विशेष है ।।

तरंग--२८ लौकिक वाङ्गिन रूपक स्तरंगः ।। ७२

विज्ञापना :-- पुष्ट जीव कुं कि प्रभुन कुं तारतम्य कितनो है ।। आज्ञा :-- रज पर्वत को जैसे तारतम्य है वैसो ही जीव तथा प्रभु को तारतम्य है ।। कल्याण भट्टजी विज्ञापना करें हैं कि जीव है सो रज है और पुरुषोत्तम पर्वत समान हैं यह जो मैंने कह्यो है सो युक्त है ।। आज्ञा यामें दोय दृष्टि हैं एक लौकिक दूसरी अलौकिक ।। दोनों में बहोत तारतम्य है ।। जीव है सो रज है और पुरुषोत्तम पर्वत है सो लौकिक दृष्टि अनुसार है ।। तथा अलौकिक दृष्टि के अनुसार कहवे में हौं डरपुं हुं ।। तब विज्ञापना -- आपकुं डर कासुं है ? भगवद भक्त में हु प्रायः जीव भाग रहे हैं ।। जामें जीव भाग

होंय वामें लौकिक दृष्टि अवश्य होय है ।। सो वचन कुं मिथ्या माने हैं -- विश्वास नहीं होय है ।। अविश्वासी के सामने कही अलौकिक वार्ता वक्ता के सर्वार्थ कुं नाश करे यासुं हौं डरपुं हुं ।। जामें अणुमात्र हु जीव भाग होय सो या अलौकिक दृष्टि के अनुसारी वचन कुं कबहु न सुने ।। अलौकिक वार्ता में अधिकारी तो सर्वोत्तम भक्त हैं और वैसो भक्त तो भूतल में सर्व प्रकार सुं दुर्ल्लभ है ।। तथा अलौकिक वार्ता कोऊ के आगे कबऊ प्रकाश नहीं करनी यह मेरो मत है यामें संशय नहीं है ।। अगर प्रभुन की इच्छा सुं कि अपनी (वार्ता की) इच्छा सुं कऊं प्रगट होय तो वामें जीव कुं दोष नहीं जाननो ।। यदि अपनी (वक्ता की) इच्छा सुं ही श्रेष्ठ वक्ता कि कनिष्ठ वक्ता कबऊ कहुं प्रगट करे तो तब वार्ता अवश्य ही क्रोध करे है जब वार्ता क्रोध करे है तब वक्ता को कार्य अवश्य नाश होय है जासुं अलौकिक वार्ता है सो साधारण नहीं है किन्तु सो हू एक प्रभुन की उछलित रसात्मक स्वरूप ही है ।। सो या वार्ता के कुपित होयवे में वक्ता को सर्व कार्य नाश होयगो ही यामें मेरो निश्चय है ।। शुकदेवजी तो चलके राजा परीक्षत कुं कथा नहीं सुनाई ।। किन्तु सो कथा ही वहां जायके प्रभुन की इच्छा सुं प्रगट भई है ।। जहां अलौकिक वार्ता प्रभुन की इच्छा सुं स्वतः प्रगट होय है वहां श्रोता कि वक्ता के मन में सर्व प्रकार सुं रस उछलित होय है ।। या प्रकार के लक्षण सुं बुद्धिमान निश्चय करके यह अलौकिक वार्ता अपनी इच्छा सुं (वार्ता की) कि प्रभु की इच्छा सुं प्रगटी है या हेतु सुं वामें आंछो वक्ता श्रोता होय कि न होय तो हु रस भंग नहीं होय है ।। श्रीजी आज्ञा करें हैं कि भटजी हों तो अबहु अपनी इच्छा सुं नहीं कहुं हुं किन्तु यह वार्ता अपनी इच्छा सुं प्रभुन की ऐसी इच्छा सुं ही प्रगट होय है ।। जैसे कृपा विशेष सुं भक्तन में श्री गोकुलाधीश प्रभु प्रगटे हैं वैसे यह वार्ता हु कृपा विशेष सुं

भक्तन में ही प्रगट होय है ।। यासुं जैसे श्री गोकुलाधीश प्रभु हैं वैसे ही यह वार्ता है ।। तब भट्टजी विज्ञापना करें हैं कि अलौकिक वार्ता रूप परम अमृत प्रगट होय तो हौं पान करके कृतार्थ होय जाऊंगो ।। तब आज्ञा करें हैं कि जैसे रज है वैसे तो प्रभु हैं और पर्वत है सो जीव है ।। पर्वतपनो की महिमा बड़ाईपनो, तथा रज पनो कि लघुता यह अनेक प्रकार की है वामें गुणन सुं जो महिमा कि लघुता है तो श्रेष्ठ है ।। प्रभुन में भक्ति, स्नेह आशक्ती व्यसन, सर्वात्म भाव सुं सेवन और अनेक प्रकार स्नेह कुं करनो है सो परम गुण है यासुं अन्य श्रेष्ठ गुण नहीं है परन्तु यह सगरो गुण जीव में ही प्रतीत होय है ।। वैसे पुरुषोत्तम में तो यह एक हु गुण नहीं है ।। दूसरी बात जीव तो महापापी अधम कृतघ्न वहिर्मुख दुर्बुद्धि है वामें प्रेम आशक्ति होय तो यह दूषण है परन्तु यह सगरे ही वामें प्रतीत होय हैं ।। बहुत भांति विचारके कहें हैं कि रज समान तो भगवान हैं तथा पर्वत समान श्री गोकुल प्राणपति के भक्त हैं ।। श्री गोकुल के जो प्रभु हैं उत्तम हैं श्रेष्ठ गुण संपन्न हैं ।। सबन सुं ही यह प्रभु अधिक हैं ऐसो महाप्रभु वैसे जीव की तुच्छता की दुषणन कुं नहीं माने है केवल भक्ति गुण कुं ही देखे है तासुं वा जीव कुं वा भक्ति स्नेह सुं वाकुं अपने सुं महा विशेष माने है तासुं पर्वत समान ही है और अपने कुं रज समान ही प्रभु जानें हैं ।। जासुं प्रभु तो अलौकिक दृष्टि वारे हैं तासुं मैंने जो वचन कह्यो है, यह हु अलौकिक है ।। यामें प्रमाण तो या प्रभुन को अनुभव ही है ।। ***मुनिं शान्तं निर्वैरं समदर्शिनं अनुव्रजाम्यहं नित्य पूर्व पूयेऽब्रिरेणुभिः ।।*** जो भक्त निरपेक्ष है प्रभु के बिना और कोउ की अपेक्षा नहीं राखे है कि मननशील है तथा शांत निर्बैर है कि समदर्शा है ऐसे भक्त के तो हौं सदैव पीछे ही चलूं हुं ।। अपने कुं परमाणु सुं हु अणु अत्यन्त लघु माने है ।।

तरंग--२९ प्रदोष भक्तोत्कर्ष निरूपक स्तरंगः ॥ ७६

विज्ञापना :-- भगवदीय को भगत्प्राप्ति वेग कैसे होय ?
आज्ञा :-- भगवदीयन के संग सुं भगवत्प्राप्ति होय है ॥
विज्ञापना :-- कैसे भगवदीयन के संग सेवन सुं वेग भगवत्प्राप्ति होय है ? तामें साधारण भगवदीयन कुं दोष तथा न्यूनता वाकुं प्राप्त होय जाय है सो विलंब होय है ॥ स्वयं उत्तम निर्दोष भगवदीय है दृढ़ है सो यदि अपने सुं हित तथा दोष वारे भगवदीय कुं संग की सेवा करे तब वाके दोष तथा हीनता या उत्तम कुं नहीं प्राप्त होय है किन्तु वामें जो प्रभुन कुं प्रेम कि अनुग्रह है सो जो उत्तम वैष्णव कुं दुर्ल्लभ है सो हु यामें प्राप्त होय जाय है ॥ पूछतो भयो हु कि वा हीन के संग, सेवा करवे वारे को प्राप्ति कैसे होय है तथा निर्दोष उत्तम भगवदीय कुं जो प्रभुन कुं प्रेम तथा अनुग्रह दुर्ल्लभ है सो वा हीन कुं कैसे प्राप्त होय है ?
आज्ञा :-- जैसे मैया को प्रेम तथा अनुग्रह जो उत्तम निर्दोष पुत्र कुं हु दुर्ल्लभ होय है सो दोष वारे हीन पुत्र पर विशेष ही होय है ॥ निर्दोष कि उत्तम भक्त यदि कछु अपराध करे तो प्रभु क्रोध ही करें और हीन कि दोष वारे भक्त बहुत ही अपराध करे तोहु क्रोध नहीं करें हैं जैसे उत्तम पुत्र अपराध करे तो वा पर तो अत्यन्त क्रोध करे है जो ता दोष वारो अत्यन्त हीन पुत्र अपराध करे वा पर क्रोध कछु नहीं करे है ॥ जैसे मैया उत्तम निर्दोष पुत्र के संग हु वैसे अत्यन्त चित्त नहीं करे है ॥ हीन दोष वारे पुत्र के संगी में तो अत्यन्त ही चित्त करे है वैसे प्रभु हु उत्तम निर्दोष भक्त के संग वैसे चित्त कुं नहीं करें हैं तथा दोष वारे हीन भक्त के संगी में तो चित्त कुं अत्यन्त ही करें हैं ॥ तासुं दोष वारे हीन भक्त में हु प्रभुन की प्रीति कि कृपा कुं विचारके वामें विचार वारो भक्त कबऊ न द्रोह कि अनादर कुं करे ॥ प्रत्युत वाके संग कि सेवा कुं करे तासुं प्रभुन की कृपा सुं

कि प्रेम सुं गुणन सुं हु पूर्ण होय जाय है ॥ प्रभुन ने जिनकुं अलौकिक दृष्टि दान करी है वे भक्त निसंदेह होयके वैसे दोष वारे हीन भक्तन कुं हु सर्व प्रकार सुं सेवा करें तब पुरुषोत्तम हु विनके संग की सेवा करवे वारेन कुं हु सब सिद्धि कुं दान करें हैं ॥ श्रीजी यह विचारके कि याने मेरे सदोष हीन भक्तन कुं हु निष्कपट होयके सेवा संग कियो है यासुं वेग ही विनकुं अपने स्वरूप हु दान करें हैं ॥ दोष वारेन कुं संग नागन कुं जो संग है श्रेष्ठ चंदन वृक्ष कुं बाधक नहीं है ॥ उत्कृष्ट की संगती है सो दोष वारे को फल है जैसे चंदन वृक्षन सुं जो संगती है सो नागन हु कुं शीतलता देवे है ॥ दोष वारेन के संग सुं उत्तम जन में हु उपकार होय है जैसे विलाई के संग सुं मूसा नष्ट होय जाय हैं ॥ जैसे भस्म के संग सुं दर्प्पण हु निर्मल होय है ॥

तरंग--३० सब तरंगों के सार श्री कल्याण भट्टजी ने दिये हैं ॥ ७८

इति श्रीमद् गोकुलेश लीला सुधासिंधो श्रीमुख श्रीमदुक्ति मुक्ता मये श्री गोकुलेश कल्याण भट्ट संवाद श्री गोकुलेशाश्रित श्री रमणलाल पार करुणा पात्रेण लोकनाथेन व्रज भाषायाम ध्रूदित चतुर्दश कल्लोल समाप्तम् ॥ श्री गोकुलेशार्पणमस्तुः संवत् १९६७ आस्विन कृष्ण -- ९ गुरु ॥ प्रति उतारी संवत् १९९७ अषाढ़ सुद १० ने शुक्रवारे देसाई हिम्मतलाल माणेकलाल ना जय जय श्री ॥

गुजराती लिपि पर से हिन्दी लिपि में प्रति करी संवत् २०५८ अषाढ वद -- ९ ता० ३. ८. २००२

देसाई गोकुलदास हिम्मतलाल एड्वोकेट बड़ोदा के सादर जय जय श्री ॥

■■■■■■■■■■■

श्री श्री गोकुलेशो जय जयति

कल्लोल जी चौदहमो

तरंग पहलो

"श्री महाप्रभुजी प्रणम्य गोकुलाधीशं भक्त स्नेह वशंबद कल्लोरत्त"

श्रीमद् गोकुल के सर्वस्व श्रीमद् गोकुलेश प्रभुन के महाकृपापात्र अंतरंग रसिक भक्त श्री कल्याण भट्ट जी श्री महाप्रभुजी की महा कृपा सुं श्रीमुख क्षीर सागर सों प्रगट भये सिद्धांत रत्नरूप चतुर्दशम कल्लोलजी कूं प्रगट करत भये है तामें श्रीजी के महाकृपापात्र अनन्य शरण श्री रमणलाल जी महाराज जी की आज्ञा सुं आपके कृपापात्र चरण के शरण हों (पं. लोकनाथ) श्री आपकी कृपाबल सुं ही भाषानुवाद करूँ हुं ।

तामें श्री कल्याण भट्ट जी मंगलाचरण करत प्रथम श्लोक में कहे हैं कि **गोकुलेश प्रपद्येयं भगवंतम कृपार्णवम । आविर्भूय कलौ घोरे यो विश्वमकृतार्थयत ।।** कृपासागर भगवान् श्री गोकुलेश प्रभून की हों शरण कुं प्राप्त होवूं हूं जो श्री गोकुलेश प्रभु या घोर कलियुग में प्रगट होयके सगरे जगत कूं कृतार्थ कर देते भये हैं ।।१।। सो श्री गोकुलेश महाप्रभु जी जलघरा में विद्यमान हैं भाग्यवारेन में श्रेष्ठ अपने दो तीन भक्त हू आपके पास विराजमान हैं तब हों प्रणाम करके विज्ञापना करत भयो हूं के ।।२।। हे महाराज ईश्वर महाप्रभो श्री आपके श्री मुख सुं तथा शास्त्र सुं हुं मैंने बहुत बेर ही सुन्यो है कि ।। परमेश्वर की लीला के श्रवण सुं वाकी अवस्य ही प्राप्ती होय है हे महाप्रभो भक्त तो असंख्यात ही वा परमेश्वर की या लीला कूं बहुत बार ही सुने है ।।४।। या प्रभु कूं प्राप्त नहीं होय है वामें कारण कहा है सो श्री आप आज्ञा करिये, या प्रकार की मेरी विज्ञापना कूं सुनके श्री महाप्रभु जी ।।५।। हंसत-हंसत श्री मुख कमलवारे होयके कृपापूर्वक मोकूं आज्ञा करत भये हैं कि "जो महाभाग्य वारे भक्त, भगवान पूर्ण परमेश्वर की धन्य लीला कूं सुने हैं, विनकूं सो श्रवण वृथा नहीं होय है बिन भक्तन कूं वा भगवान की प्राप्ति बिना यत्न अवस्य ही होयगी परन्तु ।।७।। बिलंब सो होयगी, जासुं वक्ता के मुख सुं वा वा अन्य के मुख सुं वा वा अन्य वस्तु कूं नहीं प्राप्त होय

है ॥८॥ जे भक्त तो वा वा वक्ता के मुख सुं वा वा अन्य वस्तु कूं प्राप्त होय है वे तो वेग ही वा प्रभु कूं इहां प्राप्त होय है ॥९॥ श्री कल्याण भट्टजी कहै हैं कि श्री महाप्रभु जी के श्रीमुख रूप क्षीरसागर सो प्रगट भये या प्रकार के अत्यन्त मधुर अमृत कूं हो पान करके, या कृपासागर महाप्रभुन सुं हों फेर ही पूछतो भयो हों कि ॥१०॥ हे महाराज श्री गोकुल मंगल महाप्रभो श्री आपने जो वा वा अन्य वस्तु कूं कह्यो है सो हौं नहीं जानूं हुं वा वा अन्य वस्तु कूं मोकूं बोध करावो कि जतावो ॥११॥ तब दीनबंधु श्री महाप्रभुजी मों दास के प्रति आज्ञा करत भये हैं कि जैसो जैसो उत्तम वक्ता, भक्त, जैसे जैसे श्रोता भक्त कूं मिलके वाके प्रति उत्कर्ष पूर्वक जैसे जैसे कहै वैसे वैसे वा लीला के श्रवण वा वा अन्य वस्तु की प्राप्ति हूं श्रोता कूं होय है ॥१२॥ वाकुं स्पष्ट कर दिखावे है कि किसी भक्त वक्ता के मुख सों तो श्रोता भक्त कूं लीला कूं श्रवण ही प्राप्त होय है और कछु हुं नहीं होय है वैसे और किसी वस्तु की भक्त सुं तो वर्षा प्राप्त होय है, वैसे और सुं कर्षण कि हलसुं भूमि को खोदनो प्राप्त होय है वैसे अन्य वस्तु बीज बोवनो तथा अन्य किसी भक्त वक्ता सुं तो शोधन होय है अंकुर में बाधक अनुपयोगी धासादि कूं निकारनो होय है ॥१५॥ तथा कोइ सुं अंकुर कि कोइ सुं पल्लव कि अन्य कोइ सुं पुष्प होय है किसी वक्ता भक्त के मुख सुं फल होय है ॥१६॥ तथा अन्य सुं फल कुं पाक हुं होय है कि कोइ सुं रसपान होय है सो जैसे जैसे वक्ता भक्त उत्तम होय है कि जैसे-जैसे उत्तम श्रोता होय है कि जैसे-जैसे श्रोता में प्रभुन की कृपा विशेष होय है ॥१७॥ वा वा वस्तु की प्राप्ति वैसे वैसे होय है सो जैसे जैसे वा वा वस्तु की प्राप्ति होय है ॥१८॥ वैसे वैसे ही प्रभुन की प्राप्ति वेग होय है यदि वा वा अन्य वस्तु की प्राप्ति नहीं होय है तो प्रभुन की प्राप्ति में विलम्ब होय है ॥ श्री कल्याण भट्ट जी कहे हैं कि श्री महाप्रभुन के या वचन कुं सुनके फेर वा प्रभुन को प्रणाम करके हुं विज्ञापना करत भयो हुं, हे महाप्रभु वा वर्षादि कुं स्वरूप तो मेरे प्रति आप श्री कहें, तब श्री महाप्रभु जी मंदहास्य कुं प्रगट करके सुन्दर मधुर अक्षरन सुं मेरे प्रति आज्ञा करत भये हैं कि ॥२०॥ प्रभुन की लीला को श्रवण करत कानों में अमृत की धारा की प्राप्ति जैसे मानो, तब तो वर्षा कही जाय है ॥२१॥ श्रोता के मन में लिखी भई जैसे ही जब प्रभुन की लीला विराजमान होय है तब

तो, सो चित्त रूप क्षेत्र कुं कर्षण ही जाननो ॥२२॥ जहाँ लीला को श्रवण करत ही सो श्रोता सत्यरूप ही जब जब द्रढ़ निश्चय करे है सो चतुर बुद्धिमानो ने बीज बोवनें कहयो है ॥२३॥ धान्य के बढ़ायवे में बाधा करवे वारे तृणादिक जैसे होय हैं वैसे वा लीला के श्रवण करत में श्रोता भक्त जो दुष्ट बुद्धि तथा बहिर्मुख पूर्वपक्ष कि वाचा दोष कि चित्त के संशयन कुं हुं जो निवर्त करे है वाकुं क्षेत्र को शोधन कहे हैं ॥२५॥ प्रभुन की लीला जो श्रोता कुं रुचे है वाकुं ज्ञानवारे अंकुर कहे हैं श्रोता कुं बारंबार वा लीला श्रवण में जो निश्चय सुं अत्यन्त उद्यम करनो है ॥२६॥ वाकुं चतुर रसिक भक्त पल्लव कहे हैं । प्रभुन की लीला कुं प्रथम सुन रहे भक्त कुं फेर वा लीला के सुनवे बिना नींद नहीं आवे है कि भोजन नहीं रुचे है कि पान हुं अत्यन्त नहीं रुचे है, याकुं श्रेष्ठ भगवदीय जन पुष्प रूप कहे हैं, श्रोताजन जामें सदैव ही अपने ऊपर जो वक्ता के उपकार कुं माने हैं वा वक्ता को अपने कुं दास माने है तथा वाकुं धनी मानके अपने कुं नित्य ही कर्जदार माने हैं याकुं रसिक भक्त फल जान्यो है श्रोता भक्त महाप्रभुन की लीला कुं श्रवण करत ही वामें वर्णन किये प्रभुन की जो सुन्दरता शोभा, गुण, कृपा, चतुरता, कोमलता, वैसे रस के प्रकारन कुं कि भक्तन के कि स्वामिनी जी के हुं वैसे सौन्दर्य माधुर्य शोभागुण चातुरी आदि अनेक प्रकारन कुं जो साक्षात अनुभव करे है वाकुं फलपाक कहे हैं जब वा लीला कुं श्रवण करत ही स्त्री भावकुं चित्त में प्राप्त होयके वा प्रिय के संग चिरपर्यन्त ही वैसे वैसे जो रमण करे हैं याकुं श्रेष्ठ भक्त फल को सपान कुं कहे हैं पुरुषोत्तम की जो प्राप्ति है सो यहां परम फल है याके अनन्तर सो श्री गोकुलपति श्री महाप्रभुजी बाहिर प्रगट होय दान कियो है लीला योग्य देह, जाकुं, ऐसे वा भक्त के संग जो रस के प्रकार सुं अत्यन्त रमण करे है यह परम फल है ॥३५॥ पुष्टिमार्ग को परम फल यही है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्री मुख श्रीमदुक्ति मुका चतुर्दश कल्लोल भाषानुवादे फल -- पर्यवसायी लीला -- श्रवण -- निरूपक प्रथम स्तरंग ॥१॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग द्वितीय

श्लोक -- **कालान्तस्मेया श्रीमान गोकुलप्राणनायकः ।**
विज्ञापितो महाराजाधिराजा करुणाणवः ।।

अर्थ -- श्री कल्याण भट्टजी कहे हैं कि और समय में हौं श्री गोकुल के प्राणनायक श्री महाप्रभुजी के आगे विज्ञापना करत भयो हुं, कि हे महाराजाधिराज करुणासागर महाप्रभो पुरुषोत्तम की रसरूप लीला में जीव कुं प्रवेशका प्रकार सुं होय श्री आप करुणा सुं आज्ञा करें। तब दीनबंधु गुणसागर श्री महाप्रभुजी शोभायमान श्री मुखारविंद सुं मंदहास्य कुं प्रगट करके जीवन के मंगल अर्थ परमानंद समूहरूप अद्भुत उत्तम अत्यंत दुर्लभ वैसे वचनामृत रूप अमृत के सरोवर कुं अत्यन्त प्रगट करते भये हैं ।। कि जा सरोवर में हौं हृदय सुं हौं सर्व प्रकार स्नान पानादिक भली प्रकार करतो भयो हुं तासुं मेरी मलीनता ताप दोष सगरे ही निवर्त होय जाते भये हैं, भीतर बाहिर हुं अनिरवचनीय शीतलता ही प्रगट भई है, और मेरे में कोई अनिरवचनीय आनंद प्रंसर तो भयो है, जो मेरे अनुभव के गोचर ही हैं जाकुं सर्वप्रकार सों हौं वर्णन नहीं कर सकुं हुं ।।७।। अब सगरे जीवन के मगल अर्थ वा अमृत सरोवर कुं हौं प्रगट करूं हुं कि अचानक ही प्रथम जब सों श्री महाप्रभु जी जा जीव पर करुणा करे हैं तब यह जीव पुष्टिमार्ग पराभक्त होय है फिर जब प्रभु अत्यन्त कृपा करे हैं, तब वहां वह भक्त वा पुष्टिमार्गीय भक्तन के मुख कमल सुं वा पुष्टिमार्ग के तत्व के श्रवण कुं प्राप्त होय है, फेर जब कृपा करै हैं तब याके हृदय में पुष्टिमार्ग तब अत्यन्त द्रढ़ स्थिर होय जाय है, फेर जब कृपा करे हैं तब या श्रीजी की रसमय लीला में प्रवेश करवे लिये याकुं सुन्दर मनोरथ होय है, फिर जब बाके ऊपर प्रभु कृपा करे हैं, तब सो जन जिनके प्रति श्री महाप्रभु जी ने श्री मुख्य स्वामिनी जी के सखी के प्रति जैसे दान कियो होय, वैसे कछु अनिरवचनीय भावदान कियो है, वा पुष्टिमार्ग परायण भक्तन के संगसुं सो प्राप्त होय है, फिर जब प्रभु अत्यन्त कृपा करे हैं, तब सो श्री स्वामिनी जी की सखी भाववारे भक्तन की अत्यन्त दुर्लभ सेवा कुं

प्राप्त होय है, कि जब प्रभु कृपा करे हैं तब वा भक्तन की कृपा कुं प्राप्त होय है फिर जब प्रभु कृपा करे हैं तब सो भक्त वा मुख्य स्वामिनी जी की सखीन के स्वरूप को तथा विनके भाव के स्वरूप को जाने है, फेर जब प्रभु कृपा करे तब सो वा मुख्यस्वामिनी जी की सखीन की सेवा करवे की इच्छा करे हैं फेर जब प्रभु कृपा करे तब विनकी सेवा के योग्य अलौकिक देह को प्राप्त होय है फेर जब प्रभु कृपा करे है सो वा सखीन की सेवा कुं प्राप्त होय है, फेर जब प्रभु कृपा करे हैं तब बिनकी सखीन की कृपा कुं प्राप्त होय है, फेर जब प्रभु कृपा करे हैं तब श्री मुख्य स्वामिनी जी के स्वरूप कुं तथा बाके भाव के स्वरूप कों जाने हैं, फेर जब महाप्रभु जी कृपा करे हैं, तब सो भक्त श्री स्वामिनी जी की सेवा कुं करवे की इच्छा करे है, फेर जब प्रभु कृपा करे हैं तब सो भक्त वा श्री मुख्य स्वामिनी जी की सेवा योग्य अलौकिक देह को प्राप्त होय है, फेर जब प्रभु कृपा करे है सो मुख्य स्वामिनी जी की सेवा कुं सो प्राप्त होय है, फिर जब महाप्रभु जी कृपा करे है, तब वा मुख्य स्वामिनी जी की सगरी सखी या भक्त कुं अत्यन्त आशीर्वाद देवे है, विनमें एक आशीर्वाद कुं हौं कहुं हुं, याकुं तुम भली भाँति सुनिये जासुं श्रवण करो जो आशीर्वाद तुम कुं कृत्य-कृत्य ही कर देवेगो । तब एकांत में सो श्री मुख्य स्वामिनी जी कि वाके सो प्रिय श्रीजी हुं श्रृंगार रस लीला में अत्यन्त आशक्त होयके परमानंदमय सुन्दर वा वा विलास कुं करे हैं तब तो वा लीला स्थल में अंतरंग सखीन कुं हुं प्रवेश नहिं होय है तामें हुं वा प्रिया जी की अत्यन्त कृपा पात्र अत्यन्त प्रिय होंय तिन सखीन कुं ही कबहुं कहुं कछुक प्रवेश बड़े यत्न सुं ही होय है जब वा प्रिया प्रिय को रस विलास लीला बड़े यत्न सुं ही होय है तब श्री स्वामिनी जी कुं लज्जा विशेष ही प्राप्त होय, तब यह श्री मुख्य स्वामिनी जी वा लज्जा के अनुकूल होयके सखीन के प्रति जायवे की इच्छा करत अत्यन्त विह्वल भयी की वा रमण शय्या सुं भली भाँति उठे हैं, तामें सहसा तो उठ सके नहीं है, तासुं दक्षिण श्री हस्त कमल कुं वा शय्या के ऊपर राखके वाके बल सुं बांये श्री हस्त कमल सुं प्रथम रस के आवेश में न्यारे होय रहे अपने वस्त्र कुं संभारत ही तथा रस के आवेश सुं पीठ पर, के अंशन पर, विखर रहे दीर्घ स्निग्ध घुँघरारे बारन सुं अत्यन्त शोभायमान होय रही है, तब निरावर्ण शोभायमान प्राणनाथ

श्री महाप्रभु जी, या प्रिया जी के निरावर्ण सगरे अंगन कुं चिरपर्यन्त निरखत ही आनन्द के समूह में निमग्न होय हैं, तथा निरावर्ण श्रीजी, अपने श्री अंगन के अनुभव रूप आनन्द के समुद्रन में या प्रियाजी कुं निमग्न करत ही या प्रियाजी के अंग-अंग में ही प्रकाशमान होय रही श्रम की शिथिलता कि परम अद्‌भुत शोभा कि रस के अनुभव सुं बढ़ रहे आलस कुं कि वैसे विलासन के समूहन कुं रसिक शिरोमणी श्रीजी मन तथा नेत्र रूप जिह्वा सुं पान करे हैं तथा वा प्रिया के श्रीमुख में लज्जा के भार सुं अत्यन्त नम्र होय रहे नयन कमल में विराजमान श्रम आलस्य शिथिलता तथा रस के अनुभव सुं बढ़ रही शोभा कुं कि अनेक विलासन कुं, सो परमानंद सुं उछल रहे श्रीजी मन तथा नेत्र रूप जिह्वासुं पान करे हैं, तब वैसे वा श्री महाप्रभु जी के हृदय में वा प्रिया जी के अर्थ कोउ अनिर्वचनीय महाप्रेम रस कुं समुद्र सर्व प्रकार सुं उछले है, तब वा प्रेम रस सुं प्रेरणा किये श्रीजी वा प्रियाजी कुं फेर ही द्रढ़ आलिंगन करे हैं, तब श्रीजी कुं रमण की अभिलाषा द्विगुणी ही प्रथम सुं ही अधिक बढ़ जाय है, तब वा मृगनयनी प्रिया जी श्री स्वामिनी जी में प्रथम लीला सम्बन्धी लज्जा अत्यन्त ही उछल रही हती या दूसरे रमण सुं प्रथम सुं हुं द्विगुणी लज्जा ही या प्रिया जी में अत्यन्त बढ़ जाय है, यह दोनों हुं आपस में जासुं अत्यन्त प्रबल है एक समय में ही एक स्थान में ही मिले है तासुं आपस में विजय की इच्छा करे है यह लज्जा तो या प्रसन्नता कुं हठ सुं ही आछादन करवे की इच्छा करे है, इन दोनो में बलवारी एक प्रबल दूसरी कुं विजय करवे में समर्थ नहीं होय सके है या प्रकार के कौतुक कुं श्रीजी देखत अत्यन्त प्रसन्न होय, तही तब निमर्याद श्रृंगार रस लीला रूप महासमुद्रन कुं प्रगट करे है सो प्रभुन कुं जो या प्रकार की प्रसन्नता है तथा दोनों लीलान सुं या मुख्य स्वामिनी जी कुं जो प्रसन्नता है वा सब प्रसन्नता सुं कि मुख्य स्वामिनी जी की वा प्रसन्नता सुं प्राणनाथ श्रीजी कुं जो सर्वतो अधिक प्रसन्नता उपजे है या सगरे हर्ष कुं जो अनुभव है कि अनुभव जो ब्रह्मादिकन कुं हुं अत्यन्त दुर्लभ है सो रस को सार रूप अनुभव हमारे वचन सुं तुमकुं होय, पर यह एक आशीर्वाद है । अब वा सखीन को दूसरो आशीर्वाद वर्णन करे है याकुं भली भाँति सुं सुन, जब विपरीत रमण की अभिलाषा वारे प्यारे कुं यह मुख्य स्वामिनी जी प्रसन्न करवे अर्थ प्रिय जैसे पुं भाव सुं रमण करे है

तब प्रियाजी की सगरी ही अलके अत्यन्त ही चंचल होय है कि विखर जाय है तब केशपाश हुं खुल जाय है विनमें गूंथे फूल हुं गिर जांय हैं दोनों ताटक हुं अत्यन्त चंचल होय है, तब कपोलन में अलौकिक अपूर्व शोभा बढ़े है श्री मुख में तो वेग ही रति श्रम सुं पसीना कि बिंदु पसर जाय है सो निर्मोल मुक्तारूप होयके अत्यन्त ही प्रसन्न करे है, विशाल भाल पर छिप रही जो तिलक की शोभा है सो क्षण-क्षण बढ़ रही अपूर्व शोभा कुं प्रगट करे है तब हार टूट जाय है प्रिया जी के जा जा अंग सुं भूषण गिर जाय हैं वा ही क्षण में अपूर्व अद्भुत शोभा प्रगट होय के वा वा अंग कुं अत्यन्त ही सुन्दर करे है प्रिय श्रीजी के हुं बा बा अंगन में अत्यन्त शोभायमान होय रहे नखक्षत दंतक्षत अनेक प्रकार के चिन्ह दर्शन में आवे है तब प्रिया प्रिय के खंड्ति भये जे दोनों अधर प्रिया प्रिय में उछल्लित तरंग भ्रमर समूह वारे हर्ष के समुद्रन कुं निरंतर ही वर्षा करे हैं। अंग अंग में तब रोम हर्ष तो चिर पर्यन्त ही प्रकाशमान होय है, श्री कंठ में जो गद्गद् स्वरा है सो भीतर विस्तार वारे अनिर्वचनीय रस कुं कहे हैं, तब श्री मुखन सुं कछु-कछु अव्यक्त मधुर वचन उदय होय है ॥५९॥ या अमृत के पान कुं, भाग्यवारी सखी ही प्राप्त होय हैं, सो तब वा प्रिया, प्रिय कुं गाढ़ ही आलिंगन करे हैं, तब कब हुं तो प्रिय श्रीजी रतिरमण कुं ही शोभायमान करे है कबहुं तो प्रिय श्रीजी चरित्रन सुं प्रिया कुं अनुकरण करे है कि विपरीत रमण कुं शोभायमान करे हैं कबहुं श्री स्वामिनी जी चेष्टान सुं प्राण वल्लभ कुं अनुकरण करे हैं कबहुं प्रिय श्रीजी प्रिया कुं विजय करे है कबहु प्रिया जी प्रिय कुं विजय करे हैं कबहुं सो प्राण वल्लभ श्रीजी स्वामिनी जी कुं विजय करके हुं अपने कुं प्रिया जी सुं पराजित कियो माने हैं तासुं वा स्वामिनी जी के बस हुं होय जाय है। कबहुं तो सो प्रिया जी हुं प्रिय सुं पराजय कुं प्राप्त होय के हुं करोड़न प्राणन सुं अत्यन्त प्रिय कुं अत्यन्त विजय कियो ही माने हैं, ऐसे प्रिया प्रिय कुं अनेक प्रकार सुं रसमय युद्ध प्रवर्त्त होय है, जा संग्राम में वे दोनों प्रिया प्रिय ही स्थिरता ग्रह के बिराजे हैं तामें लज्जा, श्रम, मर्यादा तथा संकोच यह सब तो अत्यन्त कातर होयके दौड़ जाय है, नहीं जाने हैं कहा चलो जाय है वहां-वहां लाखन है उछल्लित तरंग, तथा भ्रमर जिनमें, ऐसे अनेक प्रकार के, केवल आनंद के अनंत समुद्र ही निमर्याद अत्यन्त उछले हैं। अहो तब

अत्यन्त प्रबल श्रृंगार सर्वस्व रूप रस कुं ही ऐकछत्र राज प्रवृत्त होय है, तब यह दोनों प्रिया प्रिय तो वारस रूप चक्रवर्ती राजा के सर्व प्रकार सुं अत्यन्त आधीन होयके ही रहे हैं, तब अत्यन्त कृपापात्र, अत्यन्त स्नेह भरे चित्तवारी जे कितनी ऐक सखी हैं जिनमें उछल्लित हैं आवेश समूह जासुं ऐसे वा प्रिया प्रिय के अजाने ही या रसरूप युद्ध में दूर सुं कि समीपसुं दर्शन करत आनंद के समुद्रन कुं लूटे हैं, तब अत्यन्त प्रिया सों मुख्य स्वामिनी जी प्राप्त भये वैसे पराजय सुं ही प्रिया कुं वा संग्राम में विजय करके छांड़े हैं, तब वा प्रकार में, युद्ध में, प्रिया जी के अंग, सहायक होयके, प्रिय के अंगन के संग अत्यन्त युद्ध कुं करत भये हैं, सो प्रियाजी वा अंगन कुं अत्यन्त ही मान आदर करे हैं, अहो सो प्रिय श्रीजी कब हुं दया करके हुं एकांत में जा अनिर्वचनीय रस रूप अंग सुं अन्य सुन्दरीन के प्रति हर्ष के समुद्रन कुं दान करत भये हैं -- प्रिय के वा अंगन सुं या जंघन ने सर्व प्रकार सुं युद्ध कियो है, पराक्रम करके वा प्रिय कुं सर्व प्रकार सुं वश हुं कर लियो है या हेतु सू प्रियाजी वा जंघन के उपर अत्यन्त प्रसन्न होयके प्रथम वाके प्रति ही अत्यन्त अमूल्य, अद्भुत सुन्दर वस्त्र देवे हैं, कि लेंहगा पहिरे हैं और जा हृदय पर प्रिय श्रीजी क्षण मात्र अन्य प्रिया कुं धारण करे हैं वा हृदय के संग युद्ध कर रहे मेरे कुच युगल कुं, मुक्ता हार टूट गयो है यासुं विनके ऊपर अत्यन्त प्रसन्न होय के प्रिया जी प्रथम सुं हुं अधिक सुन्दर हार वाकुं पहिरावे हैं तथा यह करुणासागर प्यारो श्रीजी जा कानन सुं क्षण मात्र अन्य सुंदरी के रस अर्थ विज्ञापना कुं सुने हैं, प्रिय के वा कानो के संग युद्ध कर रहे ॥८१॥ मेरे कानों के रत्न जटित ताटंक गिर गये हैं, तासुं विनके ऊपर प्रिया जी अत्यन्त प्रसन्न होय के वा अपने कानों के प्रति प्रथम सुं हुं सुन्दर अत्यन्त मनोहर अमूल्य रत्नाटंक पहिरावे हैं अहो यह प्रिय कृपा सिंधु श्रीजी वा भुजान सुं क्षण भर अन्य सुन्दरी कुं हर्ष सुं आलिंगन करे है प्रिय के वा भुजान सुं युद्ध कर रही मेरी भुजान के बाजु बंद टूट गये हैं तासुं विनके ऊपर अत्यन्त प्रसन्न होयके प्रथम सुं श्रेष्ठ अत्यन्त मनोहर अमूल्य बाजु बंद ही विनकुं पहिरावे हैं तथा यह प्रिय जा श्री ह़स्तन सुं क्षण भर और सुन्दरी कुं हर्ष सुं समाधान करे हैं याके वा श्री हस्तन के संग युद्ध कर रहे मेरे हाथन के कंकण टूट गये हैं यासुं विनके ऊपर अत्यन्त प्रसन्न होय के प्रथम सुं हुं महा सुन्दर कंकणन

कुं वा हाथन के प्रति देवे हैं, तथा गुण सागर प्रियतम श्रीजी, जा चरण कमलन सुं क्षण भर और सुंदरी कुं रसदान करवे के अर्थ वाके मंदिर में जाय हैं वा चरणन के संग सर्व प्रकार सुं युद्ध कर रहे मेरे चरणन के रत्न जटित नूपुर टूट गये हैं यासुं वा अपने चरणन पर यह प्रिया जी प्रसन्न होयके प्रथम सुं हुं सुन्दर रत्न जटित नूपुर विनके प्रति देवे हैं और यह अंगन सुं क्षणभर प्राणनाथ जी जा और प्रिया में आनन्द के समुद्रन कुं वर्षा करे हैं वा प्रिया के वा अंगन सुं सर्व प्रकार सुं युद्ध कर रहे मेरे श्री अंग के बहुत ही सुन्दर भूषण गिर गये हैं तथा यह देह हुं मेरो चारों और ही ताड़ना कुं प्राप्त भयो है कि पीड़ित हुं भयो है तासुं यामें प्रसन्न होयके सो चन्द्रमुखी प्रिया जी प्रथम सुं हुं विचित्र सुन्दर भूषणन कुं पहिरावे हैं तथा या संग्राम में मेरे या वारन ने कछु पराक्रम नहीं कियो है अत्यन्त पीठ में ही ठहरे हैं यासुं विनको तो सो प्रिया जी द्रढ़ कर ही बाँधे हैं तब प्रिय श्रीजी की कुशलता, कि राजनीति, कि बल समूह कुं अपने हृदय में विचार के, तथा महाप्रबल जो रसनाम राजा है सो हुं प्रिय के ही आधीन होय रह्यो है, या प्रकार सुं विचार के प्राणन सुं हुं अधिक प्रिय या मृगनयनी कुं मन शरीर तथा वाणी सुं हुं मिले हैं कि याके ही वश होय जाय हैं, तब सो कमलमुखी प्रिया जी हुं जो उत्कट अहंकार कुं छांड के अपने कुं मिले वाकुं सर्व प्रकार मान देनो ही योग्य है यह अत्यन्त विचार के कठिनता कुं त्याग के प्रेम समुद्र को समूहन सुं प्रेरणा करी भयी हैं सो प्रिया वा प्रिय सुं मिले हैं याके अनन्तर सो प्रियतम प्रेम सुं प्यारी जी कुं प्रणाम करे हैं सो हुं परम चतुर वर प्यारी जी वा सुन्दर वर कुं सर्व प्रकार सुं ही प्रणाम करे हैं सो प्रिय प्रिया कुं द्रढ़ आलिंगन करे हैं, सो प्रिया जी हुं वा प्रिय कुं द्रढ़ आलिंगन करे हैं, सो प्रिय श्रीजी अपने सगरे सर्वस्व कुं वा प्रिया में अर्पण करके तथा अपने कुं हुं अर्पण करे हैं, वैसे श्री स्वामिनी जी हुं अपने सगरे सर्वस्व कुं प्रिय में अर्पण करके अपने कुं हुं अत्यन्त अर्पण करे हैं सो प्रिय श्रीजी वा प्रिया जी के सुख कुं ही अपनो सुख माने हैं, वैसे पूर्ण चंद्रमाँ कूं हुं निन्दा करवे वारो है मुख जाको ऐसी सो श्री मुख्य स्वामिनी जी या प्रिय के सुख को ही अपनो सुख माने हैं सो प्रिय श्रीजी वा प्रिया के कृपापात्रन कुं अत्यन्त ही अपनो माने हैं, वैसे सो मृगनयनी प्रियाजी हुं या प्रिय के कृपापात्रन कुं अपनो ही माने है विशेष कहा कहें सो श्रीजी वाके

विना क्षणमात्र हुं नहीं ठहरे है वैसे या प्रिय के बिना यह प्रिया जी हुं क्षणमात्र हुं नहीं ठहरे हैं, ऐसी जे विनकी लीला है कि आपस में मिलनो है कि रसरूप स्नेह है कि पैसी ऐक्यता है कि आत्मभाव है, आदर है, आशीर्वाद है, ऐसे या प्रकार सुं वा प्रिया प्रिय की लीला संबंधनी श्रेष्ठ आशीष और हुं विद्वानन कुं विचार करनी कि या प्रकार की और हुं आशीष है सो बुद्धिमान कृपापात्र स्वयं विचार लेवेंगे । ऐसे सगरी सखीन के आशीर्वाद सुं कि कृपा सुं मुख्य प्रिय भाव सुं जो वा जीव में प्रिय श्रीजी की अत्यन्त कृपा होय है याकुं विचारवारे महाकृपा कहे हैं, तासुं सर्वोपर विराजमान जो कृपासिंधु महापुरुषोत्तम श्री गोकुलेश जी हैं जाके चरण कमलन की रज हुं वेदन कुं दुर्लभ है वैसे लक्ष्मी आदि कुं हुं दुर्लभ है जाके चरणन की रज को स्वरूप, लक्ष्मी आदि कि ब्रह्मा आदि हुं नहीं जान सके है सो रसात्मक परमानन्द सर्वांग स्वरूप सर्वेश्वर वा श्रीजी के स्वच्छ निस्तुष श्रृंगार रसरूप लीला में सो महाकृपा पात्र जीव अन्य सर्व प्रकार सुं दुर्लभ प्रवेश कुं प्राप्त होय है वा लीलान में प्रवेश वारे वा महाभाग्यवारे जीव के संग सों, अनन्त कल्याण गुण वारो निर्दोष परमेश्वर श्री गोकुलेश जी सदा रमण करे हैं, सो पुष्टिमार्ग में पुरुषोत्तम जाकुं अंगीकार करे हैं, वाकुं यही फल प्राप्त होय है, याकुं ही पुष्टीमार्ग में बुद्धिमान फल कहे हैं यासुं अधिक अन्य कछु हुं नहीं है ऐसो वचनामृत कुं पान हुं परम फल रूप है सो कहुं कवहुं अत्यन्त भाग्यवारेन के कान में ही कोऊ भगवद वारता हुं प्रवेश करे है ऐसी भगवदवार्ता तो मंहा दुर्लभ ही है याकुं प्राप्त होयके कबहुं नहीं विस्मरण करे ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्री मुख श्रीमदुक्ति मुका चतुर्दश कल्लोल भाषानुवादे फल--पर्यवसायी लीला--श्रवण--निरूपक द्वितीय रत्तरंग ॥२॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग तृतीय

श्लोक -- **श्री गोकुलाधिपतिये नमः कालांतरे भया प्राणनाथो गोकुल भूपतिः ।**
विज्ञापितो भामवदत्पूर्णस्य परमेशिः ॥

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे हैं कि कहुं और समय में प्राणनाथ श्री गोकुल प्रभुन के आगे मैंने विज्ञापना करी कि सर्वोत्तम भक्तन के लक्षण कृपा करके कहे, तब करुणासागर श्रीजी पूर्ण परमेश्वर के जे सर्वोत्तम भक्त हैं विनके लक्षण मोकुं कहते भये हैं कि प्रभुन के सगरे भक्तन में जो सदा अत्यन्त प्रीतिवारो होय विनमें थोड़ो सो हुं द्रोह न करे, विनके अपराधन कुं सहन करे कबहुं विनके ऊपर क्रोध न करे, वे भगवदीय यदि क्रोध सहित आयके वाकुं अगणित दुर्वचनन सुं मर्मन में वेध हुं अत्यन्त करें, तब चित्त में जो कलुषता कुं नहीं धारे कि रंच हुं क्रोध नहीं करे, सर्वप्रकार सुं निरपराध हुं होय विनके आगे वा अपराधन कुं जो सहन करे है कपट रहित होय के विनके चरणन में जो पड़े हैं विनके आगे अंजुली कुं बाँध के जो ठहरे, मधुर वचन कहे, वा वा कर्मन सुं जो चतुर सुकर्म वारो पुरुष विनकुं क्रोध शांत करे है सदैव ही विनके आगे जो सत्य वचन कहे है कि शुद्ध चित्त है, तथा प्रिय वचन कहे है शत्रु को जो अपने पुत्र समान देखवे बारो परमेश्वर के संबंध मात्र विचार सुं कि यह प्रभुन को जीव है या विचार सुं जो वा भक्त में विषमता कबहू नहीं करे है तथा सर्वन के उपकार में जो तत्पर है कि जो विषय की तृष्णा सुं मन कुं प्रभुन सुं वाके दासन सुं हटावे नहीं है कि इन्द्रियन के जो वस में नहीं है इन्द्रीय जाके वश में है कि जाको मन सदा कोमल है कबहुं कठिन नहीं है कि जो प्रभुन के धन कुं अथवा भगवदीय के धन कुं अपने अर्थ जो नहीं लेवे है, विनके प्रसाद मात्र कुं ही जो अंगीकार करे है, जो अपनो निर्वाह मात्र ही करे है कि वाके अर्थ विशेष उद्यम नहीं करे है, कि बहुत भोजन करवे सुं आलस्य निद्रा रोगादि होय है तासुं प्रभु सेवा में अंतराय होय है, या प्रकार सुं विचार के जो भोजन थोरो करे है, जो मनके वश में कबहुँ नहीं होय है जो मन कुं सदा वश में राखके सदा

भजन में तत्पर रहे है भगवद भजन में जाकुं चित्त चंचल नहीं होय है, जो सदैव ही सब कार्यन में प्रभुन कुं ही शरण आश्रय विचार करे, तथा अपने कुं जो सदा तृणरूप सुं जाने और जो बहिर्मुखन की सभा में कबहुं प्रवेश नहीं करे है वा मूर्खन के संग आलाप में जो सदा मौन ग्रह करे है, कि वहाँ सुं उठके अन्यत्र चल्यो जाय है और जो प्रभुन के कृपापात्र भक्तन के रहस्य कुं प्रकाश नहीं करे है, कि मन में जो सदा धैर्य धरे है कि जो क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, काम, लोभ, क्रोध कुं वश कर राखे है, इनके वश में जो कबहू नहीं होय है जाकुं अहंकार नहीं है कि जो भगवद भक्त जनन के संग मित्रता अर्थ जो सदा उद्यम करे है कि जो सदैव ही प्रभुन कुं कि वाके भक्त तथा स्वामिनीन कुं कि प्रभुन की लीला कुं तथा रस के भजन कुं कि अपने प्रेम कुं जो भावना करे है सो सर्वोत्तम भक्त कहयो जाय है और जो जन इ. वचन समूह कुं चित्त में धरे हैं, कि आदर सहित पढ़े है, कि सुने हैं कि वैसे और भगवद भक्तन कुं बोध देवे हैं सो वा सर्वोत्तम भगवद भक्त की कृपा सुं सर्वोत्तम भक्त होय जाय हैं ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीला सुधासिंधौ श्री मुख श्रीमदुकि मुकामये चतुर्दश कल्लोल सर्वोत्तम भक लक्षण निरूपक तृतीय स्तरंग ॥३॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग चतुर्थ

श्लोक -- **कालांतरे मया प्राणनाथो गोकुल-चंद्रमाः ।**
विज्ञापितो भामवदत्पूर्णस्य परमेश्वरः ॥

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी के हैं कि कबहुं और समय में श्री गोकुल के प्राणनाथ श्री गोकुल चन्द्रमा के आगे मैंने विज्ञापना करी है कि हे करुणासागर प्रभो सर्वोत्तम भक्तन के स्वभाव कुं श्री आप आज्ञा करें । तब करुणा के सागर श्री महाप्रभु जी पूर्ण परमेश्वर के सर्वोत्तम भक्तन के स्वभाव कुं मोकुं कहत भये हैं । जब महाप्रभुन कुं उत्तम भक्त महाकष्ट कुं प्राप्त होय है तब वा दुःख कुं थोड़ो जैसे सहन करे हैं वाकुं कहे नहीं है, तथा चित्त

में हुं प्रभुन सुं वा दुःख की निवृत्ति कुं नहीं वांछे है दिन रात्रि ही सो बारंबार हृदय में विचारे हैं, कि हौं तो प्रथम हुं अपने प्रभुन को अत्यन्त अपराधी हुं, जासुं मैंने बहुत अपराध किये हैं तासुं अब क्लेश पाय रह्यो हुं, यदि अब या दुःख की निवृत्ति अर्थ प्रभुन सुं प्रार्थना करूँ तब तो हौं नीच अत्यन्त ही अपराधी होय जावुंगो। हा हा प्रथम हुं मैंने प्रभुन की कछु हुं सेवा नहीं करी है वैसे अबहुं कछु सेवा नहीं करूँ हुं सो अब महा यत्न रूप अपने मनोरथ सिद्ध करवे में प्रार्थना करके, वा प्रिय कुं कैसे प्रवृत्त करूँ तथा अपनो जो कष्ट है सो तो अत्यन्त ही बाधा करे है, तामें हुं अपने अर्थ जो प्रभुन कुं कष्ट है सो तो सदैव ही जहाँ कहाँ ही प्रभुन के सगरे महद भगवदीयन कुं अत्यन्त ही दुःख देवे है, और यदि मेरे कष्ट कुं महाप्रभु जी दूर करे तब तो अत्यन्त दुष्ट, हौं फिर हुं वा निंदित कर्म कुं करूँगो, और जितनो कष्ट हौं अब भोग रह्यो हुं यासुं हुं जो अधिक कष्ट कुं प्राप्त होवुं तब ही मेरो भलो होय, जासुं या कष्ट के प्राप्त होयवे पर मेरो मन कबहुं फिर दुष्ट कर्म कुं करवे लिये विशेष नहीं होयगो, अहो जा मोकुं अधिक ही भोग भोगनो है तो वहां परम दयालु श्री परमेश्वर श्री महाप्रभु जी मोसुं अत्यन्त थोरो हुं भोग भुगवावे है तामें मोकुं तो धिक्कार है जो हौं दुष्ट होयवे नु या कमल-नयन की ऐसी कृपा कुं नहीं जानू हुं और जे तो महाप्रभुन के उत्तम भक्त है वे तो क्लेष के आयवे में बड़े प्रसन्नता हर्षसुं आंसुंन कुं बरसावत रोमांच वारे होय हैं, और ऐसे विचार करे हैं कि हौं धन्य हुं, मेरो जन्म सफल है जासुं आज प्राणनाथ श्रीजी मोकूं अपनो ही जान रह्यो है यदि अपनो नहीं जानते तो अवश्य ही उपेक्षा कर देते और कबहू शिक्षा के अर्थ दंड देते यम आदि जे देवता है वे तो भगवदीय जन सुं अन्य जनकुं दंड देवे है वा भक्त कुं दंड देवे में समर्थ नहीं होय सके हैं जासुं प्रभु के दासन कुं जो सुख दुःख है सो और के आधीन कबहू नहीं है सो प्रभु ही अपनी कृपा समूह सुं विनमें सुख दुःख प्राप्त करे है और यह जो आज मोकूं ऐसो दुःख प्राप्त भयो है यह तो मेरो अत्यन्त उपकारी है परममित्र है जासुं या दुःख के आयवे में ऐसे अपने प्रिय कुं हों स्मरण करूँ हुं और दुर्बुद्धि हों प्रभुन के ऐसे उपकार कुं विचार रह्यो हुं यासुं हुं प्राणनाथ जी मेरे ऊपर अत्यन्त ही कृपा करेंगे तथा जो अपने कुं प्रभुन को कृपापात्र बनाये सोई ही बंधु मित्र सर्व प्रकार

सुं उपकारी हुं है और सुख है सो बड़ो उपकारी है वासुं और शत्रु नहीं है कि सो बड़ो शत्रु है जो वेग ही बुद्धिमान कुं हुं अहंकारी बनावे है कि अपने प्रभुन कुं हुं विस्मरण करावे है सो को मूढ़ या सुख कुं वांछा करे तथा उत्तम भक्त को स्वभाव कोऊ महा सुन्दर है जासुं जो याकुं ताड़ना लिये आवे तो यह भक्त वाके ऊपर कृपा समूह सुं क्रोध नहीं करे है तासुं डरे नहीं है तथा मन में स्मरण करे है कि यह तो श्रेष्ठ भक्त है अहो अत्यन्त निन्दित सगरे दोष की निधिरूप क्रोध के वश रह्यो है कहा, योग्य तो यह हतो कि यह क्रोध याके वश में रहे, ऐसे विचारे है तथा वा भक्त के आगे यह उत्तम भक्त ठहरे है यदि सो भक्त जाय है तो यह चले है जब सो समीप आवे है तब उत्तम भक्त स्वयं ही वाकी क्रोधाग्नि कुं शांत करवे कूं चेष्टा करे हैं तथा याके चरणन में निरंतर परे है तथा दुर्वचन परायण होय रहे वाके आगे अंजुली कूं बाँध के आगे ठहरे है तथा वाकी महिमा समूह के व्याख्यान समूह सुं वाकुं अत्यन्त प्रसन्न करे, दास भाव सुं स्तुति करे, तो हुं यदि ताड़ना करे तो तब तो या क्रोध के आधिन होय रहे वा भक्त कुं तो उनकुं अपनो अत्यन्त सुखरूप ही चित्त में माने कि मेरे जे बहुत विकर्म ही मोकुं यासुं ताड़ना कराय रहे हैं । यह भक्त मोकूं ताड़ना करत ही मेरे वा अपराधन कुं वेग ही काट रहयो है तासुं यह तो मेरे हित करवे में तत्पर है जासुं यह भक्त अपने अनिष्ट कुं करत हुं मेरे इष्ट कुं अत्यन्त सिद्ध कर रह्यो है कि मेरे कुकर्म समूह कुं काट रह्यो है तथा अब मेरे ताड़ना करवे सुं ये प्रभुन कू अपराधी होयगो तासुं दुःख समूह कुं भोगेगो परन्तु यह मत होय, श्री गोकुलेश करुणासागर प्रभो मेरे इष्ट कुं करवे वारो या भक्त के अपराध कुं श्री आप सर्वप्रकार सुं ही सहन करें सर्व प्रकार सुं याकुं सुख ही करे ऐसे या प्रकार की भावना हुं करे तथा उत्तम जो भक्त होय है सो जब दुःख कुं प्राप्त होय है तब वाकुं अत्यन्त ही छिपावे है कोई कुं नहिं जतावे है जासुं ऐसे अत्यन्त डरत हैं कि सो करुणासागर प्रिय प्रभु या मेरे दुःख कुं अवश्य ही काटे तथा अपने सुखन कुं वेग ही छोड़ के यत्न कुं प्राप्त हुं होय, गजेन्द्र के कष्ट में, कि वैसे द्रौपदी के कष्ट में, जो विनको प्रभु अपने लीला मंदिर में क्षणमात्र हुं ठहर नहीं सकतो भयो है सो करुणा सुं कोमल मेरो प्रभु श्रीजी मेरे दुःख में कैसे उदास होवे है । ज्ञान शक्ति, हे प्रभो हों तिहारे चरणन में परू हुं प्रिय श्रीजी तो माखन

सुं हुं कोमल हृदय है तासुं मेरो कष्ट प्रभुन के आगे मत विज्ञापना करियों, हौं तो दुःखी सदा रहुं सो युक्त है, परन्तु मेरे अर्थ करुणासुं कोमल प्रभु भगवान श्री गोकुलाधीश जी क्लेश कुं मत प्राप्त होय, कि जामें गुण सागर प्रिय श्रीजी थोरो सो हुं यत्न करे सो सुख, सुखरूप कहाँ है किंतु दुःख रूप ही है । हा हा गजेन्द्र कुं कि द्रौपदी कुं धिक्कार है जासुं अपने क्लेश के निवर्त करवे लिये धैर्य कुं छांड़ के प्रभुन कुं ही कष्ट देते भये हैं तथा सर्वोत्तम जो भक्त है सो तो चारो हुं समय में प्रभुन की अपने में अत्यन्त कृपा ही माने है यह निर्दोष भक्त कबहू अन्य लोक जैसे नहीं माने हैं तामें एक तो यह है कि जब यह सुख कुं प्राप्त होय है तब तो केवल प्रभुन कुं ही वो सुखदाता माने है वामें श्रेष्ठ सुकर्मी भक्त सो अपनो बल नहिं माने है तथा दूसरो यह है कि जब यह उत्तम भक्त कछुक दुःख प्राप्त होय है तब यह माने है कि मैंने तो महादुःख समुहन कुं देवे वारे अनन्त ही अपराध किये हैं यह दुःख कुं तो मेरे थोरो हुं भयो है सो अनन्त महा अपराधन में हुं थोरो दुःख ही भुगवाय रही या प्रभु की कृपाशक्ति ही विजय कू प्राप्त होय रही है । तीसरो यह है कि जब उत्तम भक्त महादुःख कुं प्राप्त होय है तब कृपासागर प्रभु मोकुं शिक्षा देवे कुं उद्यम कियो है या प्रकार सुं धैर्यवारो सो भक्त माने है । चोथो यह है कि जब या भक्त सुं दुःख निवर्त हो जाय है तब सर्वोत्तम भक्त ऐसे जाने हैं कि मैंने जे जे अपराध किये हैं वे तो अत्यन्त ही दुःख सुं तरवे योग्य है कि अपार है कल्पान्तर में हुं क्षय होयवे वारे नहीं है सदैव ही मेरे दुःखदायक है जो वे अपराध वेग ही नष्ट होय गये हैं सो तो मो सरीखे दीन में हुं पसर रही प्रभुन की निमर्याद अत्यन्त कृपा सुं ही है तासुं या प्रकार के महादयालु प्रभुन कुं हो कबहुं उरुण नहीं हुं श्री कल्याण भट्ट जी कहे हैं कि सर्वोत्तम भक्तन कुं मैंने जो यह स्वभाव वर्णन कियो है याकुं जो नर श्रद्धा सुं पढ़े है कि सुने है सो अपने दुष्ट स्वभाव सुं रहित होय जाय है वा श्रेष्ठ उत्तम भक्तन के ऊपर वर्णन किये वा उत्तम स्वभाव कुं सो भक्त अवश्य ही प्राप्त होय है यामें रंच हुं संशय नहि हैं ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख श्रीमदुकि मुकामधे चतुर्दश कल्लोल चतुर्थीय उत्तम भक्त स्वभाव निरूपक रत्तरंग ॥४॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग पंचम

श्लोक -- **कदा चित्खलु परुम कारुणिकः प्राणनाथ ।**
प्रियं स्वतः सुधासारं प्रवृत्तमानः किं करमवोचन्मान ॥

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे हैं कि परम दयालु प्राणनाथ श्री महाप्रभु जी कबहु स्वयं ही मंदहास्य सुं अमृत की वर्षा कुं करत ही मो दास कुं कहते भये हैं कि कोउ राजा सभा में बेठयो हतो दोय रत्न आये जिनमें ऐक बड़ो एक छोटो वा दोनों कुं राजा देखके अपनी समीप रहवे वारे मंत्री आदिकन कुं कहतो भयो है कि इन दोनों कुं मूल्य कितनो है सो कहो, तब सगरे ही वे राजा की आज्ञा की गौरवता सुं मिलके अत्यन्त बहुत विचार के राजा कुं विज्ञापना करते भये है कि बड़े रत्न कुं मूल्य तो सुवर्ण की परार्ध प्रमाण मुद्रा है और छोटे रत्न की तो पराटिका प्रमाण है ऐसे विनके वचन कुं सुनके राजा ने विचार्यो यह सब और काम में चतुर है तासुँ अन्य विचार सुं रहित है सो रत्नन के तारतम्य कुं कहा जाने सो रत्न शास्त्र के उपदेश सू जाकी द्रष्टि शुद्ध भयी होय, कि सदैव ही वा रत्न की परीक्षा में तत्पर होय, तो सो रत्न के तारतम्य कुं जाने, यह सब तो केवल मेरी आज्ञा के गौरव सुं ही जो कुछ कहै है सो इनकुं वचन यामें प्रमाण नहीं है यामें रत्नों के परीक्षक कुं ही वचन प्रमाण है यासुं वा रत्न परीक्षक सुं ही पूछनो, यह विचार के वा रत्न परीक्षक कुं बुलवायके प्रथम वृत्तांत सुनाय के वा रत्न के मूल्य कुं पूछतो भयो है ऐसे पूछो सो रत्न परीक्षक ने कह्यो कि बड़े रत्न को मूल्य सुवर्ण की परार्द्ध मुद्रा है ऐसे जो विनने कह्यौ है सो सत्य कहयो है याकुं तो यासुं विशेष हुं मूल्य होय शके है परंतु छोटे रत्न कुं जो वराटिका मूल्य कहयो है सो वाकुं नहीं है किंतु वा रत्न के स्वरूपन कुं न जानवे वारे विनकुं हुं वितनो, कि वराटिका मूल्य है, यह छोटे रत्न तो अमूल्य ही है । तब राजा ने कहयो कि बड़े रत्न कुं बहुत मूल्य है छोटे कुं थोड़ो है ऐसे बहुत लोकन की संमति है वाकुं निरादर करके तुम ऐसे काहे कुं कहो हो तब वाने राजा के प्रति कह्यौ कि आकार बड़ो के छोटे रत्नों के तारतम्य कुं नहीं करे है किंतु गुणन की विशेषता ही तारतम्य कुं करे है सो बड़े रत्न में बहुत

गुण है तासुं तामें परार्द्ध मुद्रा कि वासुं विशेष हुं संभवे है परंतु छोटे रत्न में तो अनन्त गुण है याको मूल्य कहयो नहीं है यासुं याकुं अमूल्य होवनो योग्य है, तब राजा ने विनके गुण पूछे, तब सभा में वा दोनों रत्नों के सो बहुत गुण तथा अनंत गुणन कुं प्रगट कर सुनावतो भयो है तब राजा संतुष्ट होयके वाकुं दान मानादि सुं सत्कार कुं करतो भयो है । श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि सो यह वचनामृत हों श्रवण द्वारा पान करके तब बहुत वार ही हौं प्रमाण करके विनय सहित ही प्रभुन कुं विज्ञापना करत भयो है कि हे महाराजाधिराज कृपासागर प्राणनाथ महाप्रभो परमार्थ सुं भरी श्री आपकी या वाणी कुं जीवन में मंदजीव, की मंदबुद्धि हम स्वतः ही विचार करवे में समर्थ नहीं है, तासुं हे कृपासिंधो, याके अर्थ कुं श्री आप ही प्रगट करके कहे, तब सो परमेश्वर महाप्रभुजी आज्ञा करत भये हैं, भगवदीय के तारतम्य जानवे की इच्छावारो भगवदीय है सो यामें राजा है, सभा जो है सो संसार है, श्रेष्ठ रत्न तो दोय भगवदीय है, विनमें भगवदीय के प्रति देववारो दाता भगवदीय महारत्न है, भगवदीय से लेकर अपने कुं पोषण कर रह्यो श्रेष्ठ भगवदीय अणुरत्न है, कि छोटे रत्न है, मंत्री आदि तो यामें अलौकिक द्रष्टि रहित संसारी जीव है, वाराटिका है सो थोरो मूल्य है, रत्न परिक्षक तो अलौकिक द्रष्टिवारो भगवदीयन के तारतम्य कुं जानवे वारो भगवदीय है अधिक मूल्य है सो सबसुं विशेष परम काष्ठापन्न मूल्य है, आकार है सो कर्म है और बड़ो पनो है सो लोक में दाता भाव सुं प्रसिद्ध है, जो दाता होय वाकुं सब बड़ो कह्यौ है तथा छोटे पनो लेने सुं प्रसिद्ध है कि जे लेवे है वे छोटे है ऐसे सब कहे है, गुण है सो अलौकिक स्नेह है, अब वाकी विशेषता प्रगट करे है कि भगवदीय के प्रति देने वारे श्रेष्ठ भगवदीय कुं बहुत गुणवारो या रीति सुं जाननो कि संसार में मग्न जीव सब सुं विशेष अपने आत्मा के संबंध तारतम्य सुं कछु-कछु औरन में हुं स्नेह करे हैं जब याके भगवान तथा भगवदीयन की दया रूप भाग्य बढ़े हैं तब याकुं सो आत्मा में जो स्नेह है सो आत्मा संबंधिन कुं तथा अपने आत्मा कुं छांड़ के भगवान में तथा भगवदीयन में होय है सो स्नेह, अलौकिक हुं होय जाय है, जब वाकुं स्नेह, भगवान तथा भगवदीयन में स्थिर होय है तब वे भगवान, कि भगवदीय, याके आत्मा रूप होय जाय है वाकुं प्रथम अपनो आत्मा तो वा स्नेह सुं रहित होयवे सुं

परकीय होय जाय है या अवस्था में याके आत्मा, भगवान तथा भगवदीय है यासुं श्रेष्ठ भगवदीय कहयो जाय है अब यह श्रेष्ठ भगवदीय भगवान के प्रति कि भगवदीयन के प्रति जो कछु देवे है कि समर्पण करे है कि देवे है यासु याकुं दान तो अपनो अर्थ ही वस्तुन के स्थापन करवे में होय है यह निश्चय है तासुं याकू नाम दान नहीं है यह परम काष्ठापन्न विशेषता नहीं है किंतु अत्यन्त श्रेष्ठ भगवदीय होयवे सुं विशेष गुणवारो भाव है यासुं याकुं अधिक गुणवारो रत्न भाव है तथा जोतो भगवदीय सुं लेके अपने कुं पोषण करे है वा श्रेष्ठ भगवदीय कुं अनन्त गुणवारो भाव है सो या रीति सुं जाननो, कि जा प्रकार सुं होय वा प्रकार सुं ही वा जीव कुं स्नेह वा भगवान तथा भगवदीय में स्थिर भयो है तासुं याके आत्मारूप वे भगवान भगवदीय है विनके संबंध सुं कि विनके कृपापात्र होयवे सुं प्रथमवारे आत्मा में जो स्नेह करे है सो अब तो परकीय आत्मा में स्नेह करे है सो वामें स्नेह करत ही वा भगवदीय सुं लेके वा परकीय आत्मा कुं पोषण करे है तब प्रथमवारे अपने आत्मा कुं जो पालन पोषण है सो अपनो पालन पोषण नहीं है किंतु भगवान भगवदीयन कुं ही पोषण है यासुं याके अनंत उत्कर्ष कि अनन्त सर्वोपर गुण है यासुं वा लेवे वारे हुं या अत्यन्त श्रेष्ठ भगवदीय कुं अनन्त गुणवारो होयवे सुं अमूल्य रत्न भाव कह्यो है यद्यपि दोनों हुं अत्यन्त श्रेष्ठ भगवदीय है विनकुं स्नेह अपने आत्मा में अपनो आत्मा जान के नहीं है तथापि जो तो अपने आत्मा में स्वाभाविक स्नेह हतो सो भगवान तथा भगवदीय में स्थिर भयो है तथा भगवान कि भगवदीय वाके आत्मारूप भये है अपनो आत्मा तो परकीय भयो है कि भगवान भगवदीयन के संबंध आदि सुं तो कोऊ अनिर्वचनीय अलौकिक स्नेह सिद्ध भयो है जा स्नेह सुं वा प्रथम वारे परकीय आत्मा कुं पोषण करे है तासुं पीछे वर्णन किये अत्यन्त श्रेष्ठ भगवदीयन कुं स्नेह की विशेषता सुं अमूल्यता कही है यह सार सर्वस्व श्री कल्याण भट्ट जी कहे है ऐसे श्रेष्ठ भगवदीयन कुं जो तारतम्य महाप्रभुजी ने कह्यौ है याकुं जो शुद्ध बुद्धि वारे श्रद्धा सहित हृदय में धारण करेगो कि पढ़ेगो सुनेगो सो भक्तन में श्रेष्ठ भगवदीय होय है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख श्रीमदुक्ति मुक्तामधे चतुर्दश कल्लोल पंचम उत्कृष्ट भगवदीय तारतम्य प्रदर्शक स्तरंग ॥५॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग षष्ठ

श्लोक -- अन्यदा करुणा सिंर्धु-भगवान गोकुलेश्वरः ।
मया विज्ञापितो नत्वा दंड्वत्सुमहाप्रभुः ॥

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि और काहुं समय में भगवान करुणासागर श्री गोकुलेश्वर महाप्रभुन के आगे हौं दंडवत प्रणाम करके विज्ञापना करत भयो हुं कि हे महाप्रभो पूर्ण परमेश्वर श्री गोकुलेश प्रभुन के प्रागट्य में तो दूर निवासी जीवन के हुं सगरे दोष निवर्त होय जाय है यह योग्य है तामें इहां श्रीमद गोकुल निजधाम में जे भक्त या श्री गोकुलेश प्रभुन के निकट हुं बिराजे है या महाप्रभो के कृपापात्र होयके हुं सेवा में तत्पर मन है या महाप्रभुन के संग वार्ता कुं करे है कि अनेक विनोद हास्य वार्ता करे हैं तथा मिलके श्री आपके महाप्रसादान्न कुं आदर सुं ही भोजन करे है कि तथा या प्रभुन के चरण कमल संबंधी रस समूह कुं पान करावे है महा सुन्दर है तथा ब्रह्मादिकन कुं हुं जिनके चरणन की रज के कणिका हुं दुर्लभ है ऐसे जिनमें वे वे अत्यन्त सुन्दर गुण निरन्तर उदय होय है ऐसे हुं वे भक्त हैं सुन्दर वर विनमें हुं दोष कैसे ठहरे है करुणासागर श्री आप यह आज्ञा करे है, विनमें कोऊ भक्त में तो द्रोह, कोऊ में लोभ, कोऊ में काम विशेष, कोऊ में क्रोध प्रतीत होय है कि कोऊ में कपट विशेष है कि कितने तो मिथ्या वृथा कथा परायण है प्राणनाथ कोऊ में दश दोष कोऊ में बीस कोऊ में शत कि सहस्त्र कि लाख कि कोऊ में करोड़ कि कोऊ में तो असंख्यात हुं दोष प्रतीत होय है कि सुने है कि जाने हुं है हे प्रभो यह कैसे योग्य है जासुं जा प्रभुन के स्मरण सू कि नाम कीर्तन सुं हुं सगरे हुं दोष जर जाय है तो या महाप्रभुन के प्रागट्य में तो दोष कैसे ठहेरे वैसो पापी अजामील हुं ऐकवार ही नाम कू कछुक उच्चारण करके क्षण सुं ही निर्दोष होय गयो, वेग ही कृतार्थ होय गयो, अरु यह भक्त तो महाप्रभुन के नाम कुं निरंतर जपे है, आत्म निवेदन कि अपने सगरे सर्वस्व कू हुं निवेदन करके विराजमान हैं प्रभुन के संग इन कुं सम्बन्ध हुं अनेक प्रकार कुं प्रतीत होय है, कछु और हुं है कि यह प्रभु हुं कृपासागर है कि सर्व प्रकार सुं

समर्थ है कि सर्वज्ञ है तथा सगरे श्रेष्ठ गुणवारे हुं है तो इनके दोषन कुं काहे कुं नहीं निवारण करे है ।। श्री कल्याण भट्ट जी कहै कि मेरो इतनो वचन सुनके सो सुन्दर शिरोमणी श्री महाप्रभु जी हंसत हंसत श्री मुखारविंद सुं भाव सुं कृपा करते भये हैं, कि जा श्री गोकुलेश प्रभुन के नाम के ऐकवार हुं श्रवण सुं कि कथन सुं अनन्त ही लोक निर्दोष होय गये हैं, कि होय रहे हैं तथा आगे हुं होयेंगे वा श्री गोकुलेश प्रभुन कुं जो या श्रीमद् गोकुल में प्रागट्य है, सो अन्य कारण सुं नहीं हैं, किन्तु लीला की इच्छा सुं ही है जासुं ऐसो कार्य को हैं जो श्री महाप्रभु जी गुप्त हुं विराजमान होयके बिना यत्न के करवे में समर्थ नहीं होय सके, किंतु सगरो कार्य कर ही सके है और जो इच्छा है जब यह कृपा सिंधु श्री महाप्रभु जी घोर कलियुग में कुटिल दुष्ट महापापी नीच कपटी मूर्ख बहिर्मुख धूर्तकामी, कि वैसे और हुं जीवन के संग लीला करवे कुं इच्छा करते भये हैं तब या श्रीमद् गोकुल में सर्व पीड़ा निवर्तक प्रभु प्रकट भये हैं यासुं यह कलियुग कैसे सत्ययुग होय, तथा यह जीव हुं प्रथम जे कुटिलता आदि दोष वर्णन किये है वा वा वैसे कुटिलता आदि अपने दोषन सुं छूटे कैसे, प्रभुन की सो इच्छा कैसे निवर्त होय सके है वा प्रभुन की प्रायः सगरी ही शक्ति, इच्छा शक्ति के ही अनुकूल चले है जासुं सो इच्छा शक्ति सब शक्तिन सुं ही प्रबल है जब सो प्रभु वानरन के संग लीला करवे कुं इच्छा करते भये हैं तब वे वानर, देवता भाव कुं तो नहीं प्राप्त भये है प्रत्युत देवता हुं वानर होय होय के प्रभुन की वा लीला में प्रवेश करते भये हैं जब प्रभुन ने गोपन के संग क्रीड़ा करवे की इच्छा करते भये हैं तब वे गोप ही भये है तब सो प्रभु त्रेतायुग में प्रगट होयवे की इच्छा करते भये है तब सो सत्ययुग नहीं हो तो भयो है किंतु सांचो त्रेतायुग ही भयो है जब सो प्रभु द्वापर में प्रगट होयवे की इच्छा करते भये हैं तब सो द्वापर ही भयो ऐसे यह प्रभुन ने जब कलियुग में प्रगट होयवे की इच्छा करी है तब यह कलियुग में कलियुग ही भयो है सो सतयुग कि त्रेता कि द्वापर नहीं होय सके है जब यह प्रभु कलियुग कू सतयुग करवे की इच्छा करे, तो तब ही यह कलियुग सतयुग होय सके, और प्रकार सुं नहीं होय है यह निश्चय है, जब सो करुणासागर महाप्रभु जी दुष्टन के संग बिहार करवे की इच्छा करे है तब वे कैसे श्रेष्ठ होय शके प्रभुन की जो

इच्छा शक्ति है सो अत्यन्त ही प्रबल है कोऊ नहीं तर सके है तथा कोऊ बलवारो हुं वाकुं विजय नहीं कर सके है परन्तु जे वे वानर हैं विनकुं बुद्धिमान जन वानर मत जानो सगरे महद सुं हुं महद जानो ऐसे जे महाप्रभुन के प्राकट सम्बन्धी दुष्ट हैं विनकुं दुष्ट मत जानो विनकुं तो सबन सुं ही महामहद भगवदीय सगरे दोषो के निवर्त करवे वारे तथा श्रेष्ठन सुं हुं महाश्रेष्ठ ही जानना । यह कलियुग हुं कलियुग नहीं है जासुं जामें यह श्री गोकुलाधीश पुरुषोत्तम प्रकट्यो है सो तो सतयुग सुं ही विशेष है जैसे वानर पनो कि गोपपनो विनकुं अलौकिक होयवे सुं हीन करवे वारो नहीं है किन्तु अत्यन्त ही उत्कृष्ट करवे वारो है वैसे ही या श्रीमद् गोकुलवासी महाप्रभुन के भक्तन की दृष्टता अलौकिक होयवे सुं विनकुं हीन नहीं करे है किन्तु अत्यन्त ही उत्कृष्ट करवे वारी है जासुं जो संसारी जीव प्रभुन सुं संबंध वारो है सो मुक्त जीवन सुं हुं विशेष है पुरुषोत्तम को संबंधी जो जीव होय सो दुष्ट हुं होय तो हुं सगरे महद सगरे श्रेष्ठ भक्तन सुं हुं अत्यन्त ही श्रेष्ठ है महद है यह अपर जितनो वर्णन कियो है या प्रकार कुं चर्म दृष्टिवारो लौकिक जीव नहीं देख सके है जाकूं महाप्रभुन ने अलौकिक दृष्टिदान करी है सो बुद्धिमान ही याकुं देखे है यह श्री कल्याण भट्ट जी कहै है कि यह सगरो महारस श्री महाप्रभु श्री गोकुलेश प्रभु के मुखारविंद सुं प्रकट्यो है याकुं जो भक्त कानरूप अंजुली सुं पान करे है वाकी जो भगवदीयन में दोष बुद्धि है जो सगरे पुरुषार्थन के छेदन करवे में खडग रूप है कि महापुरुषन के संग हुं जो द्रोह करवे वारी है ऐसी सो दुष्ट बुद्धि वेग ही नष्ट होय जाय है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख श्रीमदुक्ति मुकामधे चतुर्दश कल्लोल षष्ठ उत्कृष्ट भगवदीय तारतम्य प्रदर्शक स्तरंग ॥६॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग सप्तम

श्लोक -- **ननु महाप्रभो कुतः पुनर्भगवतो भगवदीयानां च परस्पर प्रेमा प्रसरति इति ।।**

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि कवहु और दिन में फिर मैंने महाप्रभुन सुं प्रश्न कियो कि महाप्रभो भगवान कुं कि भगवदीयन कुं आपस, में प्रेम काहे कुं पसरे है, ऐसे या प्रकार मोंसू विज्ञापना किये, श्रीमद् गोकुलेश्वर चरण श्री महाप्रभु जी आपके मंदहास्य रूप पुष्पन के रस कुं पान करवे वारे, मों भौंरा कुं अपने श्री मुखारविंद सुं प्रकट भये वचनामृत रूप मकरंद सुं कृतार्थ करत आज्ञा करत भये हैं, कि भगवान कुं तथा भगवदीयन कुं आपस में एक समान शील भाव होय है, यासुं आपस में प्रेम होय है । तब मैंने फिर हुं विनय पूर्वक निवेदन कियो कि हे महाप्रभो विनकुं समान शीलभाव कैसे है । तब महाप्रभुन ने आज्ञा करी कि वा दोनों कुं ही अपने मित्र संग द्रोह, और शत्रु संग स्नेह है, यह स्वभाव दोनों कुं ही ऐक है सो स्पष्ट करे है कि भगवान परम दयालु है, तामें भक्तन के प्रति सगरे वांछित दान कर रहयो भगवान कुं आत्मा भगवान कू मित्र भयो, तामें **किंचित्कारोण्युर्वापं यत स्वदतं सुहृत्कृतं फलम्बपि भुरिकारी** भगवान अपने दिये कुं तुच्छ जाने है, और भक्त के तुच्छ किये कुं हुं विशेष जाने है, और तथा **आशु विस्मरसि दत्तमर्थिने विस्मरस्य प्रकृतं परेणय तदेव विस्मरण शील लीलयामां तथा हृदिगत न विस्मर या** विज्ञप्ति में श्री गोस्वामी जी कहे है हे प्रभो अयी कुं जो कुछ आप दान करो हो सो सब ही तुम विस्मरण करो हो तथा शत्रु जो तुमारो अपकार करे है वाकुं हुं तुम विस्मरण करो हो तासुं हे देव सदा लीला रस मग्न प्रभो अपने हृदय में स्थित मोकुं अपनी विस्मरण स्वभाववारी लीला सुं विस्मरण मत करियो इत्यादि वचन सुं भगवान कुं स्वभाव ऐसो है बहुत देके हुं अपनो दियो कछु नहीं माने है अपने दिये कुं विस्मरण कर जाय है या स्वभाव सुं कबहू भक्त के मनोरथ कुं कछुक सिद्ध करवे वारे हुं अपने आत्मा कुं याने भक्तत को मनोरथ सिद्ध कछुक हुं नहीं कियो है ऐसे मानत ही अपने मित्र रूप आत्मा के संग द्रोह ही करे है ऐसे भगवदीय हुं सदैव ही सर्व प्रकार सुं **ही भगवद**

सेवा में लोभी होय है तामें सदैव ही सर्व प्रकार सुं ही भगवान की सेवा कुं कर रह्यो भक्त कुं आत्मा मित्र भयो तामें **श्रेयसिकेन तृप्यतेः** शुभ कर्म में तृप्त कोउ होवे है नहीं होवे या न्याय सुं दीनता स्वभाव सुं हमारो आत्मा प्रभु की सेवा कछु नहीं करे है ऐसे मानत ही अपनी आत्मा संग द्रोह करे है, ऐसे भक्तन के प्रति सगरे वांछित न दे रह्यो भगवान कुं आत्मा शत्रु भयो ऐसे अपने शत्रु आत्मा में भक्तन की प्रीति कुं विचार के अपने आत्मा में प्रभु स्नेह करे है ऐसे शत्रु में स्नेह भयो तथा ऐसे सर्व प्रकार सुं सदैव भगवद सेवा कुं न कर रह्यो भगवदीयन कुं अपनो आत्मा शत्रु भयो वा आत्मा कुं भगवान पालन-पोषण प्रीति करे है यह विचार के अपने शत्रुरूप आत्मा में वेग भगवदीय स्नेह विशेष करे है ऐसे शत्रु में स्नेह भयो या प्रकार सुं भगवान तथा भगवदीयन कुं स्वभाव आपस में ऐक समान है यासुं आपस में प्रीति पसरे है यह सिद्ध भयो । श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि ऐसे श्री गोकुलेश प्रभु तथा वाके कृपापात्र भगवदीयन कुं आपस में प्रेम बढ़वे के प्रकार कुं जो बारंबार विचारे है सो जन वा श्री गोकुलेश प्रभु कुं प्राप्त होय है ।।

।। इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख श्रीमदुक्ति मुक्तामधे चतुर्दश कल्लोल सप्तम उत्कृष्ट भगवदीय तारतम्य प्रदर्शक स्तरंग ।।७।। सम्पूर्ण ।।

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग अष्टम

श्लोक -- **कदा परवशः स्वयमेव विश्वमंगलार्थ चित्किंकरेण**
विज्ञापितो मया महाप्रभुः परमेश्वरो भामगदीन ।।

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे हैं कि दास मैंने कबहुं श्री महाप्रभुन के आगे विज्ञापना करी कि, हे प्राणनाथ हे कृपानिधे महाप्रभो जे अत्यन्त ही उत्तम भगवदीय है जे श्री मद्पुरुषोत्तम भगवान श्री गोकुलाधीश के कि स्वामिनीजी के हुं स्वरूप कुं जाने हैं कि भावपूर्वक अनुभव हुं करे है ऐसे उत्तम भगवदीयन की हुं लौकिक विषयन में आशक्ति देखवे में आवे हैं सो कैसे योग्य है, सर्व प्रकार सुं समर्थ परम ज्ञानवान दया सागर हुं महाप्रभु

जी वाकुं कैसे सहन करे है वाकुं कैसे नहीं निवारण करे है, यह सुनके मंदहास्य पूर्वक श्री महाप्रभुजी आज्ञा करत भये है, वा उत्तम भगवदीयन की विषय में आशक्ति प्रभु की इच्छा सुं ही है सो योग्य है विनके हित के अर्थ ही है यासुं ही पुरुषोत्तम महाप्रभु जी हुं वा आशक्ति कुं नहीं निवारण करे है, कल्याण भट्ट जी कहै है कि तब मैंने फिर विज्ञापना करी कि महाप्रभो ऐसो हित विनकुं काहा है, जाके अर्थ वा विषयाशक्ति कुं प्रभु नहीं निवारे हैं। तब महाराज श्री महाप्रभु जी दया पूर्वक ही मोकुं आज्ञा करते भये हैं, जब अपने या भक्तन कुं वैसे भजन संबंधी विगाढ़ भावरूप शीतकाल के बढ़वे में विनके अर्थ कृपा सुं दयालु महाप्रभु जी ने अलौकिक सर्वोत्तम सर्व दुर्ल्लभ तथा परम जीवन के सिद्ध करवे वारी कोऊ अनिर्वचनीय खीचड़ी ही सिद्ध करी है जा खीचड़ी में स्वयं श्रीमान पुरुषोत्तम श्रीजी चांवर है तथा श्री स्वामिनी जी मूंग है वा स्वामिनी कुं सर्वोत्तम भाव स्नेह है संयोग जामें शीतल जल है वियोग भाव अग्नि है सो परम दयालु महाप्रभु जी ने यह खीचड़ी सिद्ध करी है परन्तु जो लौं यामें लोन तथा हींग को वघार कि अदरक नहीं होय तो लौं यह स्वादिष्ट नहीं होय है यासुं वा खीचड़ी में लोन हींग अंदरक डारवे अर्थ श्री महाप्रभु जी वा भगवदीय की लौकिक में आशक्ति राखे है जासुं वा लौकिक विषयाशक्ति होवत में ही वे भगवदीय या प्रकार सुं भावना करे है कि मोकुं धिक्कार है जासुं हों तो श्री पुरुषोत्तमादि के स्वरूपादिक जानके हुं या प्रकार सुं लौकिक विषयन में आशक्त हुं अहो जे भक्त वा श्री पुरुषोत्तम के स्वरूपादिक कुं हुं नहीं जाने है वे मोसुं निवर्त होयगो ऐसे भावना करत दीनता कुं प्राप्त होय है यह दीनता है सो वा खीचड़ी में लोन हींग, अदरक को डारनो होय है नहीं तो हों तो अत्यन्त धन्य हुं जासुं सगरे लौकिक अर्थ सुं निवृत भयो हुं पुरुषोत्तमादि के स्वरूप कुं जानू हुं तथा सर्व लौकिक अर्थ सुं निवृत्त भये महाभाग्य वारे मेरे समान और कोऊ नहीं है तथा तासुं मेरे सगरे पुरुषार्थ सिद्ध है यासुं आगे मोकुं कछु कर्तव्य नहीं रहयो इत्यादि प्रकार सुं अहंकार वा भगवदीय कुं बढ़ जाय है वा अहंकार सुं प्रथम कही खीचड़ी में प्रथम कही दीनता[1] न होयवे सुं नहीं मिले है तासुं खीचड़ी स्वादिष्ट नहीं होय है

१. या ही प्रकार सू भगवदीय कू अलौकिक खिचड़ी में दीनता रूप लोनं हीगं अदरक कूं डारनो यह खिचड़ी के स्वाद कू बढ़ावे है ।

ऊपर कहीं वा दीनतासुं तो ऊपर कहयो अंहकार होय नहीं है तासुं वा खीचड़ी में लोंन हींग अदरक मिले है सुन्दर स्वादिष्ट सिद्ध भयी खीचड़ी कुं वे महा भगवदीय आनन्द सुं आस्वादित करे है ॥ श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि या प्रकार सुं महामंगल मूर्ति श्री जगदीश श्री गोकुल के प्राणनाथ श्रीजी ने यह खीचड़ी वर्णन करी है याकुं जो निर्गुण शुद्ध बुद्धिवारो भक्त वारंबार चिरपर्यंत विचारे है सो भगवदीय महाप्रभुन की वा खीचड़ी कुं वेग ही प्राप्त होय है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख श्रीमदुक्ति मुक्तामधे चतुर्दश कल्लोल अष्टम स्तरंग ॥८॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग नवम

श्लोक -- **कदाचित्कृपा परवशः स्वयमेव विश्वमंगलार्थो परमेश्वरो भामगदीतः ॥**

अर्थ -- महाकृपालु श्री कल्याण भट्ट जी कृपा करत और रहस्य कुं प्रकट करत कहे हैं कि कबहु कृपा के पराधीन भये परमेश्वर श्री महाप्रभु जी जगत के मंगल अर्थ स्वयं ही मोकुं आज्ञा करत भये है कि या जगत में निश्चय कर चार प्रकार के जीव मिले है १. प्रथम भगवद धर्म में लगे हैं परन्तु हम भगवद धर्म कर रहे है ऐसे अभिमान ही करे है, २. वैसे और तो लौकिक अर्थन में आशक्त है तथापि हम भगवद धर्म कर रहे है ऐसे अहंकार करे है ३. वैसे और तीसरे तो लौकिक ही अर्थन में आसक्त है तथापि सदैव हम अलौकिक ही कार्यन में आसक्त है ऐसे ही भावना करे है ४. जो सदा भगवद् धर्म में अनुरक्त है तो हू ऐसी भावना करत है जो हम निरंतर लौकिक कार्यन में बूढ़ रहे हैं । ऐसे यह चार प्रकार के जीव है विनमें प्रथम प्रकार वारे तो सर्व प्रकार सुं ही नीच है दूर ऊंचे चढ़ चढ़ के ही गिरे है जासुं अहंकार है सो स्थल सुं गिराये बिना नहीं रहे है, तथा दूसरे प्रकार वारे तो यद्यपि नीचे गिरे हैं या सुं प्रथम प्रकार वारे सुं कछुक श्रेष्ठ हैं तथा तीसरे तो यद्यपि भगवद धर्म नहीं करे हैं तासुं जो सदा भगवद् धर्म में अनुरक्त है तो हुं ऐसी भावना करत हैं जो हम निरंतर लोकिकार्य में बूढ़ रहे हैं । चतुर्थ प्रकार वारेन सुं तो हीन हैं, तथापि पश्चाताप विशेष वारे होयवे सुं दूसरे

प्रकार वारेन सुं कि प्रथम प्रकार वारेन सुं तो अत्यन्त ही श्रेष्ठ हैं, जासुं पश्चाताप है सो अपने संबंधिन के नीचे गिरवे कुं निवार के विनकुं कछुक उचे चढ़ाय बिना नहीं रहे हैं, तथा चतुर्थ प्रकार वारे तो अत्यन्त भक्त होयवे सुं कि अत्यन्त दीन होयवे सुं पुरुषोत्तम कि, तामें हुं भगवान गोकुल रत्न श्रीजी के अत्यन्त प्रिय है सवन सुं ही श्रेष्ठ है परन्तु वे भगवदीय अत्यन्त ही दुर्ल्लभ है सबन के ही सगरे दोषन कुं खंडन करे हैं कि सबन में सगरे गुणन कुं धारण करे है, यदि विनकुं प्रणाम करे कि दर्शन करे कि संभाषण करें तो कैसे दोषन कुं कि गुणन की प्राप्ति करे कि वामें हुं सेवा किये कि वासुँ प्रसन्न होय भये वासुँ ही विशेष सुं हुं विशेष कैसे नहीं कृपा करे अपितु अवस्य ही करे हैं कि जीवन के हित अर्थ यह प्रसंग श्री गोकुलाधीश प्रभुने आज्ञा करी है याकुं जो भक्त चिरपर्यंत विचारे है सो सगरे अहंकार सुं रहित होयके सगरे भक्तन के शुभ फलदायक जीवन रूप दीनता कुं प्राप्त होयके तथा महाप्रभुन के चरण कलमन कुं प्राप्त होयके अत्यन्त ही कृतकृत होय जाय है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीला सुधासिंधौ श्रीमुख श्रीमदुकि मुकामधे चतुर्दश कल्लोल नवम जीव चातुर्विधा निरूपक स्तरंग ॥९॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग दशम

श्लोक -- **कदाचित प्रभुवरः करुणासागरः ।**
भगवदीयस्याशु कथं पुरुषोत्तम -- प्राप्तिर्भवेदित्य पृच्छम ॥

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि कबहु हौं सिरसुं बारंबार प्रणाम करके श्री महाप्रभुन के आगे विज्ञापना करत भयो हुं कि हे प्रभुवर करुणासागर महाप्रभो भगवदीय कुं पुरुषोत्तम की प्राप्ति वेग कैसे होय ? मेरी या विज्ञापना कुं सुनके तब प्राणनाथ जी मंद-मंद हंस रहे श्री मुख चन्द्र सुं मेरे भीतर के अंधकार समूह कुं निवर्त करत मोकुं आज्ञा करत भये हैं, जा अत्यन्त उत्तम भगवदीयन कुं श्रीजी अपने निकट लियो है वे भगवदीय जा जा मार्ग सू चले है वा वा मार्ग सुं ही चलत भगवदीय वा श्रीमद गोकुल के सर्वस्व भगवान

पुरुषोत्तम कुं प्राप्त होय है । यह सुनके फिर मैंने विज्ञापना करी कि अत्यन्त उत्तम भगवदीयन के काहा काहा मार्ग हैं सो आप श्री आज्ञा करे । तब मोकुं आज्ञा करत भये हैं, कि जे अत्यन्त उत्तम भगवदीय है वे लौकिक मार्ग में नहीं चले है जासुं वा लौकिक मार्ग में चलवे सुं लौकिक कुं ही प्राप्ति होय है, न कि अलौकिक पुरुषोत्तम कुं प्राप्त होय है । अलौकिक मार्ग सुं तो पुरुषोत्तम कुं ही प्राप्त होय है तासुं वा अलौकिक मार्ग सुं चले तो वा पुरुषोत्तम कुं वेग ही प्राप्त होय, जामें सो अलौकिक मार्ग तो कोऊ वन मय है, कि कोऊ पर्वत मय है, और जलमय है, कि कोऊ पवन मय है, तथा असि धारा मय है कि अग्नि मय है, तामें लौकिक भाव मय जो मार्ग है सो लोकानुसार मार्ग लौकिक मार्ग कहयो जाय है अलौकिक भाव मय जो मार्ग है सो लोक अनुकूल नहीं है तासुं अलौकिक मार्ग है सभा में वैसे दल सहित मधुर कोमल वचन कहे है कि जैसे वर्तमान हुं अपनो सगरो हुं दोष छिप्यो ही रहे तथा न विद्यमान के गुण हुं प्रकट होय कि जैसे औरन कुं न विद्यमान हुं दोष प्रकाश होय कि विद्यमान गुण हुं छिप जाय यह लौकिक मार्ग है अलौकिक फेर यह भाव है कि जासुं अत्यन्त उत्तम भगवदीय वैसी सभा में महाप्रभो प्रभुन के बिहार की वावा वार्तान में श्रवण करवे वारे परमेश्वर के कितने भक्तन कुं तो परिपूर्ण रस कुं वैसे दीनता पूर्वक कहे हैं कि जासु अपने विद्यमान हुं सगरे गुण छिप जाय कि न विद्यमान हुं दोष प्रकट होय कि जैसे औरन के विद्यमान कुं गुण प्रकट होय कि विद्यमान हुं दोष छिप जाय और यह कहनो हुं दोनोन कुं केवल श्रेष्ठ पुरुषन के आगे नहीं है किन्तु अपने संबंधिन के प्रति हुं छिप के हुं है यह जाननो तामें प्रथम कहे भाव सुं ही लोक चले है न कि पीछे वर्णन किये भाव सुं ही चले है या भाव कुं तो कितनेक उत्तम भगवदीय ही आदर करे है या सुं यह लौकिक वनमय मार्ग है तथा जासुं आपदा काल में बहुत उपकार करे कि प्राणन सुं हुं कि सर्वस्व सुं हुं जो उपकार करे हैं वैसे साधारण जनके निरंतर तो भगवदीय के वैसे उपकार कुं नहीं कहे है वैसो सभा में तो कबहू नहीं कहे है जासुं वा उपकार कर्त्ता की बड़ाई के प्रकट होयव मे विनकुं द्वेष होय है तथा अपनी हानि प्रकट होयवे कुं भय होय, तासुं अपने संबंधिन के प्रति तो कबहु भूल के हुं नहीं कहे है यह लौकिक भाव है फिर अलौकिक भाव यह है कि जासुं भगवदीय

हुं अणुमात्र हुं उपकार कुं लौकिक अलौकिक सगरे फलदायक रूप जानके वर्णन ही कर्यो करे है और औरन के आगे तो विशेष वर्णन करे है तामें हुं वैसी सभा में तो विशेष वर्णन करे है अपने संबंधिन के प्रति तो सब सुं बढ़के ही कहे है जासुं वा उपकार कर्ता के उत्कर्ष के प्रकट करवे में विन कुं उत्साह विशेष होय है कि न्यूनता के प्रकट करवे में हुं रुचि विशेष है जासुं वे उत्तम भगवदीय व थोरे से उपकार कुं थोरो नहीं जाने है किंतु जासुं हृदय भाव सुं वाने जो उपकार कियो है वा उपकार कुं बहुत ही मानत ही अत्यन्त ही प्रसन्न होवत व थोरे को हुं अधिक माने है यह अलौकिक भाव है प्रथम कहे अलौकिक भाव सुं हुं दुर्गम विशेष है यासुं यह पर्वतमय मार्ग कहयो है तामें वनमय मार्ग सुं पर्वतमय मार्ग तो विशेष दुर्गम होय है यह प्रसिद्ध ही है तथा और लौकिक यह भाव है कि जासुं बहुत उपकार करवे वारो हुं होय कि हृद हुं होय कि सगरे गुणन सुं श्रेष्ठ हुं होय अपने में कि अपने संबंधिन में सदैव प्रसन्न हुं होय रहयो होय तथा अपने में हजारन कार्यन कुं सिद्ध करवे वारो हुं होय ऐसो कोऊ साधारण जनकि भगवदीयन कुं बहु अनुग्रह करवे की इच्छा सुं कि परीक्षा करवे की इच्छा सुं अपने घर में कछुक अणुमात्र हुं वस्तु की याचना की इच्छा सुं आवे तो वा जनकुं निरंतर भगवदीय कुं कि वासुं हुं विशेष तो वाके धर्म कुं हुं वे लौकिक लोक निराधार करे है यह भाव है कि जो सदैव बहुत सुं हुं अपकार करे कि दुष्ट हृदयवारो हुं होय कि सगरे दोषन सुं हुं भर्यो होय कि अपने संबंधीन संग विद्वेष हुं करतो होय कि अपने परार्द्धन निरादर करवे में हुं उद्यम वारो होय कि गुणन के लेश मात्र सुं हुं रहित होय ऐसे भक्ताभास हुं होय ऐसो हुं यदि कपट सुं ही सर्वस्व कि स्त्री पुत्रादिक के प्राणन को हुं लेवे लिये अपने घर में आयो होय तो वाकुं कबहू निरादर नहीं करे है किंतु आगे उठे हैं कि सन्मुख जाय हैं कि निष्कपट बढ़ रहे प्रेम विशेष पूर्वक प्रणाम करे है कि रोम हर्ष गद्‌गद् कंठ आनन्द की अश्रुवर्षा कि कंपस्वर भंग सुं खंडित अक्षर पूर्वक स्तुति करे है कि आदर विशेष पूर्वक विनकुं ले आवे है कि उत्तम आसन देवे है कि विनके चरण कमल कि अंगन में सिंचन करे है तथा हों धन्य हुं आज मेरो जन्म सफल है आज पधारे हो इत्यादि वचन कहे है कि वाकुं स्नान करावे है कि भोजन करावे है कि चरण दाबे है तथा वाके वा वा वांछित वस्तु कुं अर्पण

करे है इत्यादि प्रकार सुं उत्तम भगवदीय वाकुं सर्व प्रकार सुं ही प्रसन्न करे है यह भाव प्रथम कहे अलौकिक भाव सुं ही विशेष दुर्गम है तासुं यह जल मार्ग कहयो है तासुं पर्वतमय मार्ग सुं जलमय मार्ग दुर्गम है जासुं यामें डूबनो अवस्य होय है तथा और यह लौकिक भाव है जासुं कितनेक ही लोक भगवदीय की तो बात रहित दे पर कोऊ संबंध के हुं कछु साधारण प्रिय कुं कबहुं नहीं करे है तो अधिक प्रिय कहा करेंगे कि अत्यन्त अधिकाप्रिय कहा करेंगे कि वासुं हुं महा अत्यन्त अधिक प्रिय कहा करेगो अथवा कबहू कोऊ अपने स्वार्थ कुं विचार के कछुक प्रिय यथा तथा करे है तो सदैव ही सबन कुं सुनावत ही रहे है कबहुं वा कहवे सुं विराम नहीं करे है और सो स्वजन तो विनके वा प्रिय करवे कुं अधिक तो विनके वा कहवे सुं संकोच क्लेश लज्जा पश्चाताप रूप समुद्र में निमग्न होवत ही फिर वासुं नहीं निकरे है और अलौकिक तो यह भाव है के जासुं जे भगवद भक्त शिरोमणि है वे तो सगरे दोषन की निधि रूप हुं भगवदीय के सगरे ही अत्यन्त प्रिय कुं प्रेम विनय आदर सुं कि वस्त्रन सुं तथा अपने पुत्र कलत्र सबनसुं ही सदैव ही प्रिय करे हैं वासुं क्षणमात्र हुं विराम नहीं करे है तथा करके हुं काहू के आगे प्रगट नहीं करे है जासुं वाकूं संकोच क्लेश पश्चाताप नहीं होय या प्रकार डरे है तथा अपनी बड़ायी न होय जासुं वा बड़ायी को बुरो ही जाने है विनकुं यह स्वभाव ही है तासुं सदैव ही सबन के आगे कि अपने-अपने संबंधीन के आगे हुं चुपचाप रहे है रंच हुं नहीं कहे है यह भाव प्रथम कहे भाव सुं ही विशेष दुर्गम है तासुं याकुं पवनमय मार्ग कहे है जलमय मार्गसुं पवनमय मार्ग दुर्गम है जासुं वा जल में तो कबहुं कोऊ कछुक डूबनो होय है या पवनमय मार्ग में तो पांव नष्ट होय जाय है जासुं सदैव ही सब कुं ही सर्व प्रकार सुं ही गिरनो होय ही होय है तासुं ही यह मार्ग वासु ही कठिन है तथा और यह लौकिक भाव है कि जासुं लोक किसी के प्रति हु कबहुं कछु हुं नहीं देवे है तामें भगवदीय के प्रति तो कबहु नहीं देवे है परम भगवदीय के प्रति तो अत्यन्त हु नहीं देवे है अथवा अपने कोऊ स्वार्थ कुं विचार के कबहु कोऊ कू कटु वचन पूर्वक कछु देवे है तो तन दान कुं प्रसिद्ध करत कि प्रसिद्ध दान सुं कि निरंतर तो वाके कहवे सुं कि अत्यन्त तो वाके प्रसिद्ध करावे सुं सदा पश्चाताप करत हुं तथा श्लोक **यच्चामोधाप रमधि गुणो नाघर्मे**

लब्धकामा भाषा श्रेष्ठ गुणवारे पुरुष से निष्फल भयी हुं याचना श्रेष्ठ है नीच पुरुषन नें तो सफल भयी हुं याचना श्रेष्ठ नहीं है इत्यादि प्रकार के कालीदास के बचन कुं विचारत ही निरन्तर ही व्याकुल होय है अब अलौकिकक भाव कहे है जासुं अपने संचार सुं पावन करी है भूमि मंडल जाने ऐसे जे परम भगवद भक्त मंडली में मुकुट मणी भगवदी है वे तो सर्व दोषन कुं भवनरूप घर हुं होय कि अत्यन्त तुच्छ हुं होय कि केवल स्वार्थ परायण हुं होय कि प्रतिष्ठा परायण हुं होय ऐसो भगवदी या भाव सुं होय कि वासुँ श्रेष्ठ होय वाके प्रति धन गृह दासी दासादि कि वस्त्र अनेक प्रकार के अन्न पानादि कि पुत्र कलत्रादि कि विशेष कहा कहे सर्वस्व हुं अपनो देह हुं कि अपने प्राण हुं सगरो लौकिक हुं देवे है कि तथा लौकिक पुरुषार्थन के सहित सर्व प्रकार सुं सर्वतोधिक श्री पुरुषोत्तम की भक्ति कुं हुं देवे है कि परम गोप्य कि सर्व प्रकार सुं हुं न देवे योग्य कि करोड़न प्राणन सुं हुं न्यौछावर योग्य है श्री चरण कमलन के पराग कुं किणका हुं जाकू कि आनन्द मात्र है श्री हस्त चरण मुख उदरादि श्री अंग जाके कि करोड़न काम सुं हुं सुन्दर है सुन्दरता कुं लेश हुं जाकुं नहीं पाय सके ऐसे श्रीमद गोकुल प्राणनाथ श्री महाप्रभु जी कुं हुं यथा योग्य विनय नम्रता आदर सहित ही निष्कपट ही देवे है तथा वैसे नहीं अन्य के कबहुं प्रकट होय सके अपितु कबहुं प्रकट नहीं होय है कि न भयो जैसे कि शराश्रृंग सदैव छिप्यो ही रहे है और सो दान हुं जाकुं महाप्रभुन ने अपनी कृपा सुं अपनो दर्शन सेवा प्रेम भक्ति आदि सगरे पुरुषार्थ प्राप्त किये है वाकु सदा अभ्यास किये लौकिक अन्न पान वस्त्र धनादि जो दान है सो यह दुर्गम है पवनमय मार्ग में गिरनो होय है या असिधारा मार्ग में तो चरण छेद हुं होय गिरनो हुं होय है तथा लौकिक यह भाव है कि जासुं लौकिक जन जौ जौ छोटे बड़ो भलो कि बुरो लौकिक कि अलौकिक काम करे है वा वासुं वे अवस्य ही अहंकार करे है तथा अलौकिक भाव तो यह है कि जासुं अन्य सबन सुं ही न होय वे योग्य हुं प्रथम कहे वा वा काम कुं करत अलौकिक भगवदीय तो रंच हुं अहंकार नहीं करे है उलटे मैंने कछु नहीं कियो है ऐसे ही माने हैं यह भाव प्रथम कहे अलौकिक भाव सुं हुं अधिक दुर्गम है तासुं यह अग्निमय मार्ग है असिधारमय मार्ग सुं अग्निमय मार्ग दुर्गम है जासुं वा असिधारा मार्ग में गिरनो होय है कि चरण छेद हुं

होय है या अग्निमय मार्ग में तो याद नाश होय है गिरनो होय है कि देहनाश हुं होय है यह तीनों होय है ।। श्री कल्याणभट्ट जी कहे है कि यह सुनके फेर विनय कर विज्ञापना करी कि महाप्रभो यह अत्यन्त विषम दुर्गम मार्गन सुं अत्यन्त उत्तम भगवदीय का प्रकार सुं श्री पुरुषोत्तम कुं प्राप्त भये है कि सगरे भगवदीयन पर दयालु श्री पुरुषोत्तम हुं कैसे ही वा उत्तम भगवदीयन कू वैसे दुर्गम मार्गन सू अपने प्रति प्राप्त करावतो भयो है ऐसे विज्ञापना सुनके श्री महाप्रभु जी आज्ञा करत भये है, कि श्री गोकुल **के** प्राणनाथ जो श्री पुरुषोत्तम है सो भक्तन पर अत्यन्त दयालु है मार्गन **में क्ले**श की निवृत्ति अर्थ कि विन में सुख पूर्वक विचरवे अर्थ प्रेम सुं वा मार्गन में अपनी कृपा विशेष रूप श्री हस्तपल्लव कुं. पसारते भये हैं तासुं वे उत्तम भगवदीय वा मार्गन सुं सुख सुं ही प्रभुन कू प्राप्त होते भये है तथा परम दयालुन के शिर सम्बन्धी मुकुटमणीन के चरण समुह सुं निरांजित है चरणकमल जाके ऐसे सो श्री महाप्रभुन ने जे पुरातन उत्तम भगवदीय अपने प्रति प्राप्त किये हैं, वे हुं अपने प्रभु समान स्वभाव वारे है यासुं वे हुं आधुनिक भक्तन के मार्गन में दुःख दूर करवे लिये कि विनकुं आनन्द दान करवे लिये वा मार्गन में अपने हस्त पल्लवन कुं हुं प्रेम प्रसारते भये हैं तासुं वे आधुनिक भक्त हुं अपने हस्त पल्लव कुं हुं प्रेम सुं वा मार्गन में प्रसारते भये है यासुं अत्यन्त सुख सुं ही वा मार्गन सुं वा प्रभु कुं वे जन प्राप्त होवे, यदि जन सर्व प्रकार सुं ही वेग ही वाकुं प्राप्त होयवे की इच्छा करे तो ऐसे वा प्रकार सुं सगरे विश्व समुहन सुं सेवनीय चरणकमल वारे श्रीमद गोकुल के माणिक रत्न कृपानिधि श्री महाप्रभु जी स्वयं साक्षात् ही छे प्रकार के मार्गन कुं विवेक प्रकट करत भये है याकुं जो हृदय में चिर पर्यन्त विचारे है सो महाप्रभुन की करुणा सू या महाप्रभुन के पद कुं चरणन कुं वेग ही प्राप्त होय है ।।

।। इति श्रीमद् गोकुलेशा लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख श्रीमदुक्ति मुक्तामधे चतुर्दशा कल्लोल दशम पुष्टिमार्गीय विविचक स्तरंग ।।१०।। सम्पूर्ण ।।

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग एकादश

श्लोक -- **अयान्या भिन्नहनिनेहसि संमया किंकरेण विज्ञापितो इत्यं महाप्रभुः ॥**

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहें हैं कि और समय में वा महाप्रभुन के आगे हौं दास या प्रकार सुं विज्ञापना करत भयो हुं कि हे महाप्रभो या पुष्टिमार्ग में जो परम काष्ट्यपन्न कि सर्वोपर फल कहा है, तब श्री महाप्रभु जी आज्ञा करत भये हैं, कि हमारे या पुष्टिमार्ग में साधन नहीं है वैसो फल तो कछु हुं नहीं है सो प्रकट कर दिखावे हैं कि जब भगवदीय प्राणनाथ महाप्रभुन में क्रांतभाव मयी भक्ति कुं प्राप्त होय है तब तो प्रथम किये साधन समूह के वैसे फल के रूप सुं वा क्रांतमयी भक्ति कुं ही जाने है, परन्तु वा समुह कुं वैसी भक्ति फलरूप नहीं होय है, जासुं सो क्रांत भाववारी कि प्रियारूप भगवदीय जब अपने प्रिय श्री महाप्रभु कुं दर्शन करे हैं तब वा दर्शन कुं ही फलरूप जाने है न के वे क्रांतभाव मयी भक्ति कुं फलरूप जाने हैं वाकुं तो साधन रूप ही जाने हैं, याके अनन्तर जब वा प्रिय कुं हंसत ही अनुभव करे है तब तो वा प्रिय के हास्य कुं ही फलरूप जाने है, न के वा दर्शन कुं, वाकुं तो साधन रूप ही जाने है, याके अनन्तर सो प्रिय श्रीजी वा प्रिया के संग नर्म वचन कहे हैं, तब वाकुं ही सो फलरूप जाने हैं न के हास्य कुं, वाकूं तो साधन रूप ही जाने हैं याके पीछे स्पर्श कर रहे वा प्रिय के कंप सहित जब अंचल कुं गहे है तब तो वाकुं ही फलरूप जाने है न के नर्म कुं वाकुं तो साधन रूप ही जाने है । फिर जब यह प्रिय श्रीजी मंदहास्य कुं प्रकट करत ही कि कछु कछु कहत जब वा प्रिया कुं बेनी में कि कपोलन में कि कुचन में कि हस्तकमल में कि भुजा में कि वा वा और हुं अंग में वैसे-वैसे स्पर्श करे है तब तो सो प्रिया वा स्पर्श कुं ही फलरूप जाने है न के वा अंचल गहन कुं वाकूं तो साधन रूप ही जाने हैं याके पीछे जब सो प्रिय श्रीजी वा प्रिया कुं गाढ़ आलिंगन करे है तब तो वा आलिंगन कुं ही फलरूप जाने है न के वा स्पर्श कुं वाकुं तो साधन रूप सुं ही जाने है फिर जब सो प्रिय श्रीजी वा प्रिया जी के अधर कुं आस्वादित करे है कि पान करे है तब तो प्रिया जी वा अधर आस्वादन कुं ही फलरूप जाने है न कि

वा चुंबन कुं वाकूं तो साधन रूप ही जाने है ता पाछे जब प्रिया के कपोलन में कि अधरन में दंत क्षंत करत कि अन्य अंगन में नखन सुं क्षत कर बाहिर जैसे भीतर कि अंतःकरण में हुं रस समुद्रन के समुहन के समूह प्रवेश करावे है तब तो सो प्रिया जी वाकुं ही फलरूप जाने है न कि अधर स्वाद कुं वाकुं तो साधन रूप ही जाने है याके पीछे जब प्रिया जी श्री अंग कुं प्रिय की रति लीला सुं कृतार्थ करे है तब वाकुं ही फलरूप जाने है न कि वा दंतक्षत नखक्षत रूप बाह्य रमण सिद्ध अंतर आनन्द सिंधु समुह कुं फलरूप जाने है वाकुं तो साधन रूप सुं ही जाने है ता पाछे जब सो प्रिया जी विपरीत रमण सुं श्री अंग कुं कृतार्थ करे है तब वाकूं ही फलरूप जाने है न कि रति रमण कुं वाकुं तो साधन रूप सुं जाने है या प्रकार सुं है वैसे परम काष्ट्यापन्न फल की मर्यादा नहीं है जासुं फलन की परा अनंत है यासुं ही दर्शन साधन है चुंबन वैसो फल है यह जो कथन है यह हुं नहीं संभवे है जासुं **कपोल-योर्न्यस्य करौ कथं -- चित्कांतेन कांतिमूलमप्यनाचुंबित । त्राहित लोचनेन चित्रार्पितेनैव चिरायु-स्वस्या ॥** प्रिया के कपोलन में हाथन कुं राख बड़े यत्न सुं प्रिया के मुख कुं चुंबन के अर्थ प्रिय ऊचो करके हुं वा सुन्दर मुख में जासुं लोचन अटक गयो है तासुं सो प्रिय चिरपर्यन्त तो चित्र में लिखे जैसे ही अटक जातो भयो है ऐसो जा लीला में कपोल के स्पर्श तथा वामें प्रकट भये रोम हर्षादि कि प्रिया के मुख में स्थित सुंदरतामय आदि किरणादि कि वा प्रिया के नयन में स्थित भाव विशेष कातरता सुन्दरता लज्जा विकासादि कि दर्शनादि की मुख्यता है चुंबन की गौणता है यासुं चुंबन कुं वैसो फल भाव कैसो होय, श्री कल्याण भट्ट जी कहे हैं, कि करोड़न प्राणन सुं नोछावर योग्य है श्री चरण कमल संबंधी पराग की लेश जाकी, ऐसे श्रीमद वृन्दावन के कमल रूप, वा श्रीमद् गोकुल मंडनरूप श्रीजी के गिर रहे निर्मल महामधुर मादक रसरूप वचन समुह कुं कान रूप अंजुलि सुं पान करके फिर दंडवत प्रणाम करके विज्ञापना करत भयो हुं, कि हे महाराजाधिराज, परम दयालु तथा रसिक समुह सुं पूजनीय है चरणकमल जाके है ऐसे श्री श्रीमद गोकुल पति प्रभो, जब विपरीत रमण सुं अपने कुं जब कृतार्थ करे हैं, इत्यादि प्रकार सुं जो श्री आपने आज्ञा करी है सो तो परम काष्ट्यापन्न फलरूप होयगी । तब श्री महाप्रभुजी ने आज्ञा करी कि सगरी रात्री भर प्रकट करी वैसी महास्वाद

महामधुर लीला, संबंधी महाहर्ष समुह सुं प्रफुल्लित जाकुं मुख कमल है तथा वैसे रस भरे लोचन सुं जो वा वा भावन कुं वर्षा कर रह्यो है कि प्रथम भये वा वा अर्थ कुं सूचना कर रहे, वैसे प्रिय कुं जब सो प्रिया जी अनुभव करे है तब तो वाकुं ही फलरूप जाने है न कि विपरीत रति कुं वाकुं तो साधन रूप सुं ही जाने है ऐसे याके पाछे वा रसिकेश्वर प्रिय श्रीजी ने जो जो कछु दियो है वाकुं जब प्राप्त होय है तब वाकुं ही फलरूप जाने है न के प्रथम कहे प्रिय के वैसे स्वरूप दर्शन कुं वाकुं तो साधन रूप सुं ही जाने है श्री कल्याण भट्ट जी कहे हैं कि या प्रकार श्री गोकुलाधीश प्रभुन ने पुष्टीमार्ग में जो वैसे परम काष्टापन्न फल कुं निषेध कहयो है याकुं जो प्रेमपूर्वक चित्त में विचारे है भक्ति श्रद्धावारो सो बुद्धिमान प्रभुन की कृपा समुह सुं वा वा प्रथम कहे कि न कहे हुं फल कुं प्राप्त होय है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख चतुर्दश कल्लोल एकादश पुष्टीमार्ग फलानुबंध कल्प प्रकाशक स्तरंग ॥११॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग द्वादश

श्लोक -- **कदाचित करुणा -- सिंधुर्मयो विज्ञापितः प्रभुः ।**
भगवद्धि दृते स्वतद्वार्ता सुखः ॥

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे हैं कबहुं कृपा के सागर प्राणनाथ जी के आगे मैंने विनय करी कि प्रभुन के बिहार की वार्ता में प्रभुन के कितनेक श्रेष्ठ भक्तन को पूरण रस को स्वाद होय है कितनेन कुं वैसो नहीं होय है हे ईश्वरेश्वर प्रभो वामें कारण कहा है सो मो पर कृपा कर आज्ञा करिये तब श्रीमद् गोकुल के प्राणभूषण पति आधार प्रतिष्ठा परम सुन्दरता रूप श्री महाप्रभु जी हंसत श्री मुखारबिंद होयके प्रसन्नता सहित यह वचन कहते भये हैं कि श्री पुरुषोत्तम की लीला कुं वर्णन रूप अद्‌भुत पान कुं कि पानरूप विराजमान है सो महाशोभायमान कि सगरे तापन कुं निवर्त करवे वारो है कि सर्व पति सर्व परमानन्द समुह कुं देवे वारो है ऐसे वा पानक में मधुरताके

सार सर्वस्व को निधान रूप परमेश्वर स्वयं श्री गोकुलाधीश जी उज्ज्वल मीसरी रूप है तथा उच्छल्लित रस सागर के कल्लोन की पंक्तिन सुं चंचल होय रही कि पूर्ण चन्द्रमासुं हुं अधिक सुन्दर मुखवारी जे वा श्री गोकुलेश प्रभुन की प्रियागण है विनके संग जो प्रभुन कुं संयोग है सो तो उज्वल जल है। वियोग है सो चतुर बुद्धिमानो ने मिरची को चूर्ण निर्णय कियो है कि और जे क्षण-क्षण में वे वे व्यभिचार भाव उदय होय हैं वे वे बरास इलायची कुं चूरण है श्रोता भक्त है सो पान करवे वारो है श्रवण की इच्छा है सो तृषा है याके श्रवण में पात्र तो वैसो उज्वल शुद्ध हृदय है कहवे वारो तो चतुर भक्त है सो पान या पना के परोसवे वारो है या प्रभुन की जो कृपा है सो पात्र की सुन्दरता प्रकट करवे वारो स्नेह है और कहनो है सो परोसनो है जिह्वा ही हस्त है ऐकांत है सो घर है तथा यासुं अन्य आलाप कुं जो निवारण है सो ऐकांत उपवन है भली प्रकार सुं सुननो है सो पान है तथा सुनवे में जो परम ताप है सो ग्रीष्म ऋतु है इतनी सगरी संपदा सिद्ध होय तब ही यह कहयो पना पूर्ण स्वाद कुं आस्वाद कुं देवे है नहीं तो आस्वाद पूर्ण नहीं होय है ऐसी श्री महाप्रभुन ने आज्ञा किये पानक (पना) कुं जो विचारे है सो महाप्रभु की कृपा में विना यत्न के पूर्ण आस्वाद कुं प्राप्त होय है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख चतुर्दश कल्लोल द्वादश लीला कथनय पानक निरूपक स्तरंग ॥१२॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग त्रयोदश

श्लोक -- **अन्यदा गोकुलाधीशो भगवान्विज्ञापितो तमया ।**
प्रियः प्रभो दर्शनेष्वेव वार्तायांवा सेवनेऽपित ॥

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे हैं कि कबहुं अन्य समय में हों श्री गोकुलाधीश प्रभुन के आगे विज्ञापना करत भयो हुं, "कि हे प्रभो प्रभुन के दर्शन सुं ही कि वार्ता में कि सेवा में कि कथा में कि वा प्रसंग में हुं कोई कुं ता रस विशेष अनुभव होय है कोई को थोरो होय है कि कोइ कुं विरस

होय है करुणासागर महाप्रभो वामें कारण कहा है, यह मोकुं स्पष्ट करके आज्ञा करिये। ऐसे मेरी या प्रकार की विज्ञापना कुं सुनकर रस सागर सुन्दरवर श्री महाप्रभु जी हंसित श्री मुखारविंद सुं यह आज्ञा करत भये हैं, कि इहां जीवन कुं चित्त बहुत प्रकार कुं प्रतीत होय है सो जाकुं जैसो चित्त होय है वाकुं रसकुं अनुभव थोरो कि विशेष कि अत्यन्त विशेष कि विपर्यय (विरसपनो हुं होय है) सो तोकुं अब चित्त के भेद सुनाबुहुं कि कितनेक आकाश चित्त है कितने बज्र चित्त है और लोह चित्त है कि कितने पत्थर चित्त हैं कि और सुवर्ण चित्त है और लाक्षा चित्त है और मदन चित्त है कि तथा कितने घृत चित्त है कितने माखन चित्त है कितने अमृत हृदय है और वित चित्त है विरसता के पात्र हैं तामें जो आकाश चित्त हैं, जैसे आकाश कोइ वस्तु कुं स्पर्श नहीं करे है वैसे कोइ कथा वाकुं स्पर्श नहीं करे है सो हृदय शून्य कहयो जाय है कि जो तो व्रज चित्त ऐसे कहे हैं वाकुं तो वार्ता तो स्पर्श करे है पर सो स्वयं वार्ता कुं स्पर्श नहीं करे है किंतु वाके निकट जाय है और जैसे लोह अत्यन्त निरस होय है तथा कोउ अत्यन्त कठिन वस्तु सुं हुं प्रायः नहीं भेद्यो जाय है किंतु कबहुं तीव्र विशेष अग्नि सुं ही भिदे हैं ऐसे प्रभुन की तीव्र सेवादि सुं जो कबहुं भिदे है प्राय तो अभेद्य होय है विरस होय है कठिन होय है सो लोह, मन कह्यो जाय है, तथा जो पत्थर चित्त होय है सो तो जैसे पत्थर टंकणक्षार और तीव्र अग्नि सुं ही भिदे है वैसो जो वा प्रभुन के वर्णन आदि सुं भिदे है वैसे कठिन और नीरस होय है सो पत्थर चित्त है और जैसो सोना कठिन हुं है नीरस हुं है कबहुं अत्यन्त अग्नि तथा टंकणक्षार के संयोग सो कोमल हुं होय है कि अत्यन्त सरस हुं होय है क्षण पाछे तो वैसे कठिन और निरस होय जाय है सो कबहुं साधू संगति कुं पायके जो प्रभुन की कथादि में अत्यन्त कोमल होय है कि सरस हुं होय है वाके पीछे तो प्रथम जैसे कठिन विरस होय वाकुं अत्यन्त चतुरजन स्वर्णचित्त कहे है जैसे लाक्षा थोरे से हुं अग्नि के संबंध सुं सरस कि अत्यन्त कोमल हुं होय वैंसे जो थोरो सो हुं प्रभुन की सेवादि सुं कि लीला कथादि के श्रवण आदि सुं सरस होय कि कोमल होय वाकुं चतुरजन लाक्षा चित्त कहे है कि वैसी हुं जैसे अग्नि के संबंध बिना वैसे कठिन नीरस होय जाय है वैसे जो चित्त हुं वा सेवा कथा के संबंध बिना वैसे कठिन नीरस ही होय जाय है जैसे स्वभावसुं हुं

मोम कोमल होय है थोरे सुं हुं अग्नि के संयोग सुं तो अत्यन्त ही सरस होय है तथा अग्नि के संबंध बिना कोमल ही होय है. कोमलता कुं तो कबहुं नहीं छांड़े है वैसे प्रितम के थोरे से हुं संबंध सुं जो वैसे विशेष सरस होय है वाके बिना हुं सदैव ही कोमलता कुं सर्व प्रकार सुं नहीं छांड़े है स्वभाव कुं कोमल यह मदन नाम कुं हुं जो वे घृत स्वभावसुं ही सरस कोमल होय है तामें थोरे से हाथ की गरमी सुं हुं अत्यन्त ही सरस होय जाय है वाके न होयवे में हुं अत्यन्त कोमल रहे है जो थोरे से हुं प्रभुन के दर्शन लीलादि वार्ता सेवादि सुं अत्यन्त सरस कोमल होय है वैसे पीछे हुं सरस कोमल रहे है याकुं घृत चित्त कहे हैं यामें कठिनता कुं लेश हुं नहीं होय है द्रवी भाव तथा स्नेह सुं पूर्ण ही सदा रहे हैं तैसे यामें रुक्षता को लेश मात्र हुं कबहुं नहीं होय है ऐसो चित्त तो वा प्रभुन की कृपा सुं ही होय है ऐसो चित्त कबहुं कठिन जैसे हुं प्रतीत होय है तो सदैव ही याकी कोमलता स्पर्श सुं ही निरधार करी जाय है ऐसो चित्त यदि होय तो तब कहा सिद्ध नहीं होय है तथा माखन जैसे श्वेत कि निर्मल होय तथा स्नेह सुं पूर्ण होय है कि सरस अत्यन्त कोमल स्निग्ध कठिन सुगंधीवारो होय है वैसे और में हुं स्नेह आदि गुणन कुं प्राप्त करे है वैसो जो चित्त है सो माखन चित्त कहावे है या प्रकार के चित्त में श्री गोकुलाधीश प्रभु सदा वास करे है तथा जैसे घृत सुं हुं माखन को गुण विशेष है वैसे वा घृत चित्त सु हुं माखन चित्त विशेष होय है यामें संशय नहीं है तथा अमृत के जे जे गुण प्रसिद्ध कहे है वे सगरे गुणन सुं मिल्यो अमृत चित्त कहावे है सो अमृत गुण चित्त अपने संबंधीन कुं क्षण सुं ही अमर करावे है जे गुण प्रथम कहे है कि जे गुण नहीं कहे है वे सगरे गुण या अमृत चित्त में निवास करे है यह मन अपने संबंध सुं वेग ही अघ जनके मनकुं हुं सर्व प्रकार सुं सद्रश ही करे है या चित्त की श्रेष्ठता कुं कि महिमा कुं पराध्र्धन वर्षन सुं हुं को बुद्धिमान सर्व प्रकार सुं वर्णन करवे में समर्थ होय -- अपितु कोइ नहीं होय सके है तथा श्रृंगार रस सर्वस्व के साररूप सुन्दर है श्री विग्रह जाकुं कि आनन्द समुहमय सर्वांग सुन्दर निर्दोष गुण सागर श्री गोकुल प्राण प्रभु महाप्रभु जी हुं वैसे चित्तवारे भक्त के वश में सर्वप्रथम सुं ही बिराजे है कि वैसे मनवारो भक्त जो कहे है । जो करे है जो इच्छा करे है कि जो देवे है कि जो लेवे है कि जो त्याग करे है सो सगरो ही

प्रभुन कुं सदैव ही रुचे है कि वासुं कियो जो कार्य है सो अपने किये कार्य सुं हुं प्रभुन कुं विशेष ही सुखदायक होय है ऐसो चित्तवारो भक्तराज प्रभुन कुं अपने सुं हुं अधिक प्रिय होय है ऐसो चित्त जाकुं होय सो यह मुख्य भक्त ही है श्री पूर्ण पुरुषोत्तम प्रभु वा भक्त के संग छिपके कि प्रकट सदैव ही रमण करे है श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि या प्रकार सुं श्री गोकुलाधीश चरण ने वर्णन किये चित्त के भेदन कुं जो जन पढ़े है कि सुने है वा भक्त कुं चित्त हुं क्रम सुं अमृत चित्त होय जाय है कि जामें वे श्री गोकुल प्रभु स्वयं ही अत्यन्त निवास करे हैं ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख श्रीमदुक्ति मुक्तामधे चतुर्दश कल्लोल त्रयोदश चित्तभेद निरूपक स्तरंग ॥१३॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग चतुर्दश

श्लोक -- **अन्यदा महाप्रभुः परमया कृपया रहसि**
श्रीमतामुखेन्दुनास्वतो मामवादीतः ॥

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि कबहुं और समय में श्री महाप्रभु जी ऐकांत में परम कृपा सुं स्वयं श्री मुखारबिंद सुं मोकुं आज्ञा करते भये है कि जब परमेश्वर स्वयं कृपा सुं स्वयं श्री मुखारबिंद सुं मोकुं आज्ञा करते भये है कि जब परमेश्वर स्वयं कृपा सुं अपने जा स्वरूप कुं जीवन के मंगल अर्थ प्रगट करे तब जीव यदि सर्वोत्तम भाव कर वाके प्रगट वा स्वरूप में प्रसन्न ही होय तो तब वाके उच्छले महाभाग्य ही जानने जासुं जब प्रभु कृपा सुं जा स्वरूप कुं प्रकट करे है तब जीवन कुं जितनो हित होय है वितनो सगरो ही अपने वा स्वरूप के हाथ में ही राखे है सो प्रगट भयो स्वरूप ही जाके जितने हित कुं करवे की इच्छा करे है वाके वितने हित कुं करे है यासुं अन्य सब कुं त्याग के ही वा प्रगट स्वरूप में ही जीव सर्व प्रकार सुं प्रसन्न होय सो प्रकट स्वरूप जब जापर प्रसन्न होय वाके वासुं हुं सगरो कार्य सिद्ध होय वाके सगरे मनोरथ तासुं ही पूर्ण होय और जे मनोरथन सुं हुं अतीत

हित होय है वे हुं वासुं ही सिद्ध होय है अहित हुं सगरे निवर्त होय है तथा जे तो वा प्रकट स्वरूप कुं छांड़ के अप्रकट कुं दौड़े है वितने प्रकट स्वरूप तो स्वयं ही छांड़ दिये है सो वा प्रकट स्वरूप के निरादर सुं अप्रकट स्वरूप हुं विनके हाथ में नहीं आवे है जैसे जो जन सुन्दर सामग्री सुं भरे परोसे पात्र कुं छांड़ के भोजन के अर्थ खाली पात्र लिये दोड़े है वाके हाथ में सो खाली पात्र हुं नहीं मिले है कि परोसवे वारे के निरादर करवे सुं सो प्रथम को परोस्यो पात्र हुं नहीं मिले है सो उभय भ्रष्ट होय है तासुं जब जो प्रभुन ने अपनो स्वरूप प्रकट कियो होय तब जीव सर्वात्म भाव सुं वामें ही प्रसन्न होय कि वाकी शरण गहे सो दिखावे है कि जैसे रावण महामुनी गणन सुं प्रशंसा योग्य पुलस्त मुनि को पौत्र हुं हतो तथा सगरे वेदन के अर्थ कुं हुं जानतो हतो परमेश्वर के प्रकट स्वरूप कुं हुं भजतो तथापि प्रकट स्वरूप रामचन्द्र से विमुख हतो सो ताकी निंदा होय है उनके छोटे भाई बिभीषण प्रकट स्वरूप रामचन्द्र में प्रपन्न हतो सो भक्तराज ऐसे स्तुती होय है ॥ परमेश्वर विमुखता रूप दोष सुं रहित हतो तथापि तब प्रकट स्वरूप रामचन्द्र में प्रपन्न हतो तासुं भक्त राज ऐसे करत स्तुति कियो जाय है ऐसे द्विविद वानर है तब प्रकट भगवान श्री कृष्ण स्वरूप सुं विमुख हतो यासुं बलभद्र ने वाकुं मार्यो तथा आज लों हुं सवन सुं निंदा कियो जाय है ऐसे शिशुपाल, दंतवक्र, जरासंधादि यद्यपि वैदिक धर्म परायण हते प्रकट स्वरूप में तत्पर हते तथापि तब प्रकट स्वरूप भगवान श्रीकृष्ण सुं विमुख हते तासुं निंदित भये वैसे दुर्योधनादि हुं सगरे कौरव पांडवन के समान नहीं हते तथा कर्ण अत्यन्त उदार दानी हतो कि गंधारी पतिवृतान में जो श्रेष्ठ हती शकुनि आदि हुं सदैव सदाचरण परायण हते वे सगरे ही ईश्वर के गुप्त स्वरूप कुं भक्त हते तथापि प्रकट स्वरूप श्रीकृष्ण सुं विमुख हते निंदित भये कि दंड कुं हुं प्राप्त भये हते तथा पांडव कि सगरी द्रौपदी आदि तो तब प्रगट स्वरूप श्री कृष्ण भगवान में ही प्रपन्न हते तासुं ही सदैव ही सगरे बुद्धिमान जन ही आज तो विनकी स्तुति करे हैं कि श्रीमद व्रजवासी सगरे गोपाल कि श्रीमति गोपिका हुं विशेष कहालों कहें कि सगरे पशुपक्षी आदि हुं वा प्रकट स्वरूप श्री कृष्ण में ही प्रपन्न हते वाके गुप्त स्वरूपन के तो नाम कुं हुं नहीं जानते हते तासुं ही सर्व प्रकार सुं ही सबन सुं ही स्तुति किये जाय है कि गान हुं किये जाय है श्री कल्याणभट्टजी कहे हैं

कि श्रीमद गोकुलाधीश प्रभुन के श्री मुखारबिंद सुं प्रकट भये या प्रकार के वचनामृत कुं जो प्रेमवारो जन हृदयरूप मुख सुं पान करे है वाके ऊपर श्री महाप्रभुजी प्रकट होय के वा भक्त के सगरे ही मनोरथन कुं पूरण करे है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख चतुर्दश कल्लोले चतुर्दश प्रकट श्री पुरुषोत्तम स्वरूप प्राप्ति क्रम विशेष निरूपक स्तरंग ॥१४॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग पंचदश

श्लोक -- **कदाचित प्रलोकेन कृमेण परमेशितुः**
प्रार्प्तिभगवदीयाना दयासागर जायते ॥

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे हैं कि कबहुं हौं दंडवत प्रणाम करके या प्रकार विज्ञापना करतो भयो हुं कि हे प्रभो हे दयासागर भगवदीयन कुं का क्रम से प्रभुन की प्राप्ति होय है या विज्ञापना कुं सुन भक्त वत्सल श्रीमद गोकुल के सर्वस्व श्री महाप्रभु जी आज्ञा करत भये हैं, कि जब प्राणनाथ श्री महाप्रभु जी अपनी भक्ति सुन्दरी सुं रस के प्रकार कुं प्रार्थना करे हैं तब वा भगवदीय भक्त सुन्दरी कुं प्रभुन के परिपक्व सर्वोत्तम भाव होय है तब सो श्री महाप्रभु जी वा प्रिय के प्रति अपनी कृपा सुं अपनी रसलीला के योग्य अलौकिक महारसमय वैसो देह सिद्ध करे है तब वाके देह इंद्रिय प्राण अंतःकरण कि और हुं सब प्रभुन के निवास योग्य आनन्दमय ही होय जाय है तब वाके संग प्रीति में रस रीति सुं रमण करवे अर्थ प्राणनाथ के वे महामनोरथ ही प्रकट होय है तथा प्राणनाथ के विना ठहर रही वा प्रिया को क्षण हुं हजारन युगन के समान बीते है तब वामें वा प्रिय की परम कृपा अत्यन्त उत्कंठा हुं बढ़े है तब प्रियतम श्रीजी वाके अंतःकरण में प्रवेश करके वहाँ दूर सुं प्रगट होय के वाके प्रति अपनो दरशन करावे है पीछे वेग ही अंतरध्यान होय जाय है ऐसे बेर-बेर ही याके अनन्तर कबहुं वाके अंतः करण में ही दूर सुं अपनो दर्शन कराय के क्रम सुं आगे आगे आवत ही निकट आयके वहाँ ही छिपके विराजे है याके पीछे फिर ही वाकी विशेष आरति कुं विचार के वाके अंतःकरण में प्रतिबिंबित होयके विराजे है छिपवे में तो संबंध मात्र हतो वाकुं प्रिय कुं

दर्शन तो नहीं हतो या प्रतिबिंब भाव में तो प्रिय कुं दर्शन होय है याके पीछे वा प्रिया की अत्यन्त बढ़ी वा चित्त कुं विचार के वाके अंतःकरण में सुवर्ण में मणी रेख जैसे जटित होय है या जटित होयवे में तो प्रथम कहे लिखित अवस्था सुं हुं अधिक शोभा कुं प्रकट होय है और जो संबंध दर्शनादि प्रथम कहयो है सो हुं सगरो यामें विशेष होय है जैसे रत्न के जटित होयवे सुं सुवर्ण की ही अधिक शोभा उदय होय है वैसे प्राणनाथ के अंतःकरण में जटित होयवे सुं वा प्रिया के अंतःकरण की हुं शोभा अत्यन्त उच्छल्लित होय है याके पीछे वा प्रिया की प्रथम सुं हुं विशेष आरति कुं देखके वाके अन्तःकरण में प्रवेश करके वज्रलेव रूप होयके बिराजे है तामें प्रथम कह्यो जटित तो कबहुं गिरे है याके पीछे वा प्रिया की वासुं हुं अधिक आरती कुं विचार के सो रसिक मुकटमणी श्रीजी यह विचार के यद्यपि याके अंतःकरण में ऐसे वज्रलेप रूप होय रहे मोकुं इहां सुं कोऊ नहीं गिरायवे में समर्थ होय शके तथापि कोउ दुर्जन कोऊ प्रकार सुं या रहस्य कुं जानके दुर्वचनादि सुं याकुं क्लेशित करे ऐसे संदेह करके वाके अन्तःकरण में विचित्र मंदिर कुं रचना करके वामें वज्रलेप रूप होय बिराजे है तथा तब सो प्रियाजी हुं कबहुं किसी पुरुष कुं कि किसी स्त्री कुं अंतःकरण में प्रवेश करे तो या संदेह सुं वा मंदिर के भीतर रहवे वारे प्रियतम कुं कोउ जानके हर लेवे तो या शंका सुं वा मंदिर कुं हुं जामें अनेक प्रकार की चिंतारूप तंतु है ऐसे गाढ़ भाव विशेष रूप वस्त्र सुं कि टेरा सुं छिपावे है याके पीछे प्राणनाथ जी वा प्रियाजी में द्रढ़ विश्वास करे है तब सो प्रिय जी वा प्रिया जी के संग सदैव ही रस रीति सुं बाहिर भीतर रमण करे हैं याकुं पुष्टिमारग में परम फल कहत हैं चतुर पुरुष याकुं पुरुषोत्तम प्राप्ति कहे है श्री कल्याण भट्ट जी कहे हैं कि श्री महाप्रभुन ने चतुरता सुं अपनी प्राप्ति में जो क्रम कहयो है याकुं जो जो बुद्धिमान पढ़े हैं कि सुने है कि निरंतर विचारे हैं तो या कृम सुं ही साक्षात करुणासागर रसिक शिरोमणी श्रीमद गोकुलाधीश प्रभुन कुं या प्रकार सुं प्राप्त होय है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख श्रीमदुक्ति मुक्तामधे चतुर्दश कल्लोल

पंचदश पुरुषोत्तम प्राप्त कृमविशेष निरूपक स्तरंग ॥१५॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग षोड़सो

श्लोक -- **अथ मयान्यदा दासदासेन नत्वा व्यज्ञाप्यतेश्वरः।**
कथं भगवदीस्य स्यात परमेशितुः ।।

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे हैं कवहुं और समय में महाप्रभु जी के आगे हौं दास प्रणाम करके विज्ञापना करत भयो हुं कि हे महाप्रभो भगवदीय को प्रभु की प्राप्ति वेग कैसे होय, मेरी या विनय कुं सुनके कृपा सागर श्री महाप्रभु जी आज्ञा करते भये हैं कि भगवदीयन कुं पुरुषोत्तम की प्राप्ति वेग ही होय यदि यह भगवदीयन के अनुसरण कुं करे तो निश्चय सुं ही प्राप्ति होय है प्रायः विनके अनुसरण कुं यह नहीं करे हैं यासुं वामें बिलंब होय है ।। श्री कल्याण भट्ट जी कहे हैं महाप्रभुन के या वचनामृत कुं सुनके फिर ही मैंने विनय करी कि हे श्रीमद् गोकुलेश भगवान, करुणासागर सगरे ही भगवदीय तो प्रायः इनके अनुसरण कुं करे है तोहुं इनकुं भगवान की वेग प्राप्ति क्यों नहीं होय है, या प्रकार विज्ञापना किये शरणागत की पीड़ा के नाश करवे वारे भगवान श्री महाप्रभु जी आज्ञा करते भये हैं कि यह तो निश्चय सुं ही भगवदीयन के अनुसरण कुं नहीं करे है यदि करे तो वेग ही वा प्रभु कुं प्राप्त होय है सो दिखावे है कि यह जो आपस में प्रणाम सेवादान मान प्रेम उपकार कि और और हुं जो करे हैं याकुं भगवदीय अनुसरण नहीं माननो यह तो देवे लेवे कुं लौकिक व्यवहार विशेष है जैसे कोऊ जन कोऊ स्वार्थ कुं मन में राखके कबहुं कोऊ जन कोऊ आपने कार्य कुं विचार के कबहुं कहुं से कछु कारण कुं लेवे है वैसे ही यह व्यवहार है यामें परमार्थ को लेश हुं नहीं है जो भगवदीय प्रथम कहुं भगवदीय में प्रणाम आदि करे है तो या भाव सुं करे हैं कि जो हों यामें यह प्रणाम आदि करूँगो तथा यामें या किये प्रणाम आदि सुं हो जानो में स्तुति योग्य होवुंगो कि मेरी लोक स्तुति करेंगे कि प्रतिष्ठा हुं मेरी चारों और पसरेगी शुभ हुं मेरो होयगो सो या प्रकार और प्रयोजन कुं विचार के जो प्रणाम आदि करनो है सो परमार्थ नहीं होय है सो तो अपने प्रयोजन की सिद्धि अर्थ ऋण ही है, और जा भगवदीय ने जामें प्रणाम आदि कियो हतो सो हुं ऐसे विचार के वासु ही विशेष प्रणाम आदि

यामें नहीं करूँगो तो मोकुं लोक दुष्ट ही जानेंगे दुराचारी कहेंगे कि मेरी चारों ओर अप्रतिष्ठा ही बढ़ेगी या या प्रकार सुं विचार के जो वामें प्रणाम आदि करे है तासुं यह जाननो कि वाने याकी प्रणाम आदि अंगीकार नहीं करी हती यदि प्रणाम आदि अंगीकार करी होय तो प्रथम कहे स्वार्थ कुं न विचार के वामें प्रेम पूर्वक दया प्रणाम आदि करतो या ऊपर कहे प्रकार सुं विचार के जो प्रणाम आदि करे है तासुं जाननो वासुं याने ऋण ही लियो हतो अब वाकुं शोधन कर रह्यो है याकुं यह विचार है कि अपने लिये ऋण कुं वेग ही देनो योग्य है नहीं तो चारों ओर अपयश बढ़े है फिर कोऊ ऋण हुं नहीं देवेगो जाने ऐकवार ऋण दियो वाकुं यदि वेग नहीं मिले तो फिर लिये बिना निर्वाह नहीं होय है सो या प्रकार सुं विचार के याने प्रथम प्रणाम आदि करवे वारे भगवदीय में जो प्रणाम आदि करी है सो सर्व प्रकार सुं परमार्थ नहीं है सो तो स्वार्थ विशेष है परमार्थ तो तब ही होय है कि जब भगवदीय सगरे ही स्वार्थ कुं छांड़ के निष्कपट होयके परमार्थ बुद्धि सुं वा भगवदीय में केवल भगवत संबंध कुं कि भगवान की कृपा पात्रता कुं ही विचार के जो प्रणाम आदि करे है और सो भगवदीय जो लोक अपने मन में स्वार्थ कुं मुख्य विचार के रहे हैं कपट सहित ही वर्ते है कि परमार्थ बुद्धि के बिना ही वाके प्रणाम आदि कुं ग्रहण करे हैं अपने ही संबंध कुं या प्रकार सुं ही विचारे है कि यासुं यह मेरो पड़ोसी है कि मेरो विशेष सुं परिचित है मेरो सहचर है सहायक है यासुं मेरो कार्य सिद्ध होयगो जासुं यह बड़ो प्रतिष्ठित है मोकुं यह निरंतर आनन्दित करेगो ऐसे या प्रकार सुं तो लों परमार्थ सिद्ध नहीं होय है और यदि यह भगवदीय केवल भगवत संबंध कुं मुख्य राखके प्रणाम आदि करे है तब तो कपट छांड़ के प्रतिष्ठित कि उदासीन कि अपने शत्रु कि अपने निंदक कि अपने दुःखदायक भगवदीयन कुं हुं प्रणाम आदि सुं अनुवृति करे है जासुं विनमें हुं भगवत संबंध विराजमान ही है और यह नहीं है कि जे अप्रतिष्ठित भगवदीय है वे भगवदीय ही नहीं है किंतु वे तो मुख्य भगवदीय है जासुं उत्तम भगवदीयन कुं अत्यन्त उत्कृष्ट ही करवे वारे हैं कि प्रभुन के विशेष कृपापात्र है जो तो प्रभुन के संबंध कुं विचारे है सो विनमें प्रणाम आदि करे ही है तासुं जो भगवदीय में प्रभुन के संबंध कुं विचार के प्रणाम आदि कुं अंगीकार करे हैं सो तो अप्रतिष्ठित उदासीन शत्रु आदि

रूप भगवदीय में हुं निष्कपट ही दया प्रेम समाधान प्रणाम आदि कुं अवस्य ही करे है तथा जो भगवदीय अपने में नमन आदिक नही करे है कि नहीं माने कि त्याग हुं करे ऐसे भगवदीय में जो प्रणाम आदि नहीं करे है कि जो अप्रतिष्ठित आदि जानके स्वयं ही वाके प्रति नमन आदि नहीं करे है कि जो अप्रतिष्ठित आदि भगवदीय प्रणाम आदि कर रह्यो होय तो वामें दया प्रणाम आदि नहीं करे है सो भगवद संबंध कुं अनुसरण नहीं करे है कि नहीं जाने है यह जाननो यदि भगवत संबंध कुं जाने तो वामें हुं अवस्य प्रणाम आदि कुं करे ही करे यह निश्चय तथा यामें विशेषता यह है कि जो उत्तम भगवदीय है कि जो अपने में हुं कृपा स्नेह करे है कि जो अपनो उपकारी है वामें जो निष्कपट प्रणाम आदि करे है कि तथा वासुं हुं जो न्यून भगवदीय है जो अपने में कपट स्नेह हुं नहीं करे है कि जो अपनो अपकारी है कि जो दोष निधी है ऐसो भगवदीय में हुं जो प्रणाम आदि करे है वैसे प्रणाम आदि सु पुरुषोत्तम अत्यन्त प्रसन्न होय है या प्रकार कृपा हुं करे है कि जे जन मेरे उत्तम भक्तन में निराभिमान होयके निष्कपट प्रणाम आदि करे है वे धन्य है यह तो परम धन्य है जो न्यूनरूप हुं मेरे भक्तन में निराभिमान होयके निष्कपट प्रणाम आदि करे है तासुं भगवदीय कैसो हुं होय कि कछु हुं करे वाकुं दोष नहीं विचारनो तासुं अलौकिक दृष्टि कुं मुख्य करके वासुं ही प्रभुन के संबंध आदि कुं मानके निष्कपट होयके सगरे हुं भगवदीयन में जो भगवदीय प्रेम सुं प्रणाम दया सेवा दान मान आदि कुं करे है वाकुं अखंड भगवदीयानुसरण जाननो कि सो इही भगवदीयन के अनुसरण कुं कि विनकी अनुकूलता कुं करे है जासुं वेग ही अवस्य ही पूर्ण पुरुषोत्तम श्रीमद गोकुल नायक प्रभु कुं प्राप्त होय है ।। श्री कल्याण भट्ट जी कहे हैं श्रीमद गोकुल के प्राणनाथ प्रभुन ने मेरे ऊपर कृपा सुं श्री भगवदीयन कुं अनुसरण व्याख्यान कियो है याकुं जो प्रेम सुं विचारे है कि सुने है कि पढ़े है वाकुं सो भगदीयन कुं अनुसरनो वेग ही सिद्ध होय है जासुं वेग ही पुरुषोत्तम कुं प्राप्त होय है ।।

।। इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख चतुर्दश कल्लोल षोड़सो भगवदीयानुसरण निरूपक रत्नंग ।।१६।। सम्पूर्ण ।।

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग सप्तदश

श्लोक -- **अन्यदा रहसि श्रीमान्मया गोकुलनायकः ।**
विज्ञापितः कृपासिंधो कथंस्यान्परमेशितुः ॥

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि कवहुं और समय में ऐकांत में मैंने श्री गोकुलनायक प्रभुन के आगे विज्ञापना करी कि हे कृपासिंधो भगवदीयन कुं प्रभुन की प्राप्ति वेग कैसे होय यह श्री आप आज्ञा करिये ऐसे मेरी या विज्ञापना कुं सुनके गुण सागर सम्पूर्ण पुरुषोत्तम श्री महाप्रभु जी हंसत श्री मुखारबिंद सुं यह आज्ञा करते भये है कि संपूर्ण निर्दोष कल्याणरूप गुण के सागर आनन्द मात्र करपाद मुखोदरादि रूप भगवान श्री गोकुलाधीश पूर्ण पुरुषोत्तम में यदि भगवदीय कुं भाव निश्चल होय तब खंडित न होय तो तब सर्व प्रकार सुं वेग ही प्रभुन की प्राप्ति होय और भाव भगवदीय कुं तब खंडित ही होय है श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि तब मैंने पूछयो है महाप्रभो करुणासागर या भगवदीय कुं भाव खंडित का कारण सुं होय है यह मोकुं आज्ञा करिये तब सर्वज्ञ शिरोमणी भगवान श्री महाप्रभुजी श्री मुखारबिंद अमृत कुं मेरे कान रूप दोना में वर्षा करत मोकुं आज्ञा करते भये है कि तब तब सावधान न होयवे सुं भगवदीय कुं भाव खंडित होय है यदि भगवदीय तब तब सावधान होय तो वाकुं सो भाव खंडित न होय श्री कल्याण भट्ट जी कहे हैं कि फिर हों प्रणाम करके करोड़न प्राणन सुं अधिक प्यारे करुणासागर श्रीमद् गोकुलाधीश प्रभुन के आगे विज्ञापना करत भयो हुं कि हे महाप्रभो यदि मोकुं कृपा सुं आज्ञा करे कि सो भगवदीय कब कब वेग सावधान होय जासुं याकुं भाव खंडित न होय या मेरी विज्ञापना कुं सुनकर सो गुणसागर श्री महाप्रभुजी आज्ञा करते भये हैं कि जब प्रभु कोऊ कुं अपने सुं विशेष कि अपने समान ठहरावे तब भगवदीय सावधान अपने भाव कुं अपने प्रभुन में ही राख नहीं जायवे देवे या विचार सुं कि यह श्री महाप्रभु जी अब अपने महात्म्य कुं आछादन करे है और के महात्म्य प्रचार करवे की इच्छा करे है या प्रकार विचारे, और जब प्रभु अपनी सेवा के कि भजन के कि भाव के महात्म्य कुं न्युन करे है तब सो सावधान होय कि जब प्रभु क्रोध

दिखावे है तब सो सेवक शिक्षा ही जाने कि जब लोभ दिखावे तब तो कृपा ही जाने जब भय दिखावे तब नीति शास्त्र के आदर कुं ही जाने जब प्रभु अपने कुं काम बस दिखावे तब कृपाँ सुं रस कुं प्रगट करे है यह जाननो जब क्षुधा कि तृषा दिखावे तब भक्तन में कृपा ही जाने कि जब अपने में पीड़ा रोग ज्वरादि दिखावे कि कोड़ गिरनो दाह उपद्रव कि और हुं वेसो दिखावे तब आसुर जीवन कुं व्याममोह करवे लिये चेष्टा करे है कि सेवकन की अपने में वात्सल्य विशेष के अनुभव करवे की इच्छा सुं वैसे दिखावे है यह जाननो और जब कपट दिखावे तब चतुरता जाने जब भक्तन कुं पीड़ित करे तब भक्तन के अपराध निवर्त करवे की इच्छा ही करे है यह जाने जब अन्नादि कुं लेवे तब दया ही जाने जब भक्तन की अत्यन्त प्रिय वस्तु कुं नाश करे तब वाके बंधन कुं ही नाश करे है विशेष कहां लों कहे जब ऐसे और और हुं अयोग्य दिखावे तब भगवदीय गुणन कुं ही माने या प्रकार सावधान होय रहे भगवदीय कुं भाव खंड्ति नहीं होय है कबहुं वसुदेव को हुं भाव खंड्ति भयो है कि कबहुं देवकी कुं कब हुं पांडवादिन कुं हुं कि कबहु द्रौपदी कुं कि कबहुं विदूर कुं कि कबहुं दारुक कुं हुं कि कबहुं उग्रसेन कुं कबहुँ कुंती कुं हुं कब हुं नारद कुं कबहुं व्यास कुं हुं कि द्वारिकावासी महापटरानी कुं हुं भाव खंड्ति भयो है यासुं भगवदीय सदा ही सावधान रहे यदि याकुं प्रभुन में भाव सदैव ही स्थिर रहेगो तो याके सगरे ही मनोरथ वेग ही सिद्ध होयगे यदि भाव खंड्ति होयगो याके सगरे ही मनोरथ नष्ट होय जायेंगे एक केवल मुख्य भक्त गोपीजनन कुं ही भाव कबहुं खंड्ति नहीं भयो है यासुं ही वे सर्वोपर ही स्तुति करी जाय है श्री कल्याण भट्ट जी कहे है यह श्री महाप्रभु जी ने अपने जनन कुं सदा सावधानता सुं रहनो कहयो है याकुं जो जन प्रेम सुं पढ़े है कि सुने है वाकुं श्री गोकुलेश्वर प्रभुन में भाव खंड्ति नहीं होय है प्रत्युत विशेष ही बढ़े है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख श्रीमदुकि मुकामधे चतुर्दश कल्लोल सप्तदश सावधानाव स्थिति निरूपक स्तरंग ॥१७॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग अष्टादश

श्लोक -- **अन्यस्मिन समये श्रीमद गोकुलप्राणनायकः ।**
विज्ञापितो मया नत्वा दंड्वत करुणानिधिः ॥

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि और समय में करुणासागर श्रीमद गोकुल प्राणनायक प्रभुन के आगे दंड्वत प्रणाम करके विज्ञापना करत भयो हुं कि हे महाप्रभो भगवदीयन में सगरे ही गुण निवास करे है कि कोउ दोष हुं विनमें रहे है या प्रकार कि मेरी विज्ञापना कुं सुनके सो परमेश्वर श्री महाप्रभु जी सुन्दर हंसित श्री मुखचन्द्र सुं अमृतमय अक्षरन सुं मेरे प्रति आज्ञा करते भये हैं कि हे तात भगवदीयन में प्रायः गुण ही है परन्तु एक दोष विनकुं सहसा नहीं छांड़े है और वे हुं वाकुं नहीं त्याग करे हैं सो दोष हुं आलस्यादि है यदि भगवदीय वा दोष कुं त्याग करे तो अवस्य ही वा पुरुषोत्तम कुं प्राप्त ही होय है परन्तु सो त्याग नहीं करे है सो भगवान जा भगवदीय कुं अपनी प्राप्ति करायवे वारे मार्ग में जितनो प्राप्त कियो है सो वितने ही वा मार्ग में रहे है, यद्यपि वासुं आगे वारे मार्ग में भलो प्रकार सुने है तब स्वयं निश्चय हुं करे है, कि यह मार्ग भलो है या आगे वारे मार्ग में हों प्रवेश करूँ तो अवस्य ही वेग ही मेरो भलो होयगो ही तो हुं आलस्य सुं वहाँ ही रहे है, वाकुं छांड़ के आगे नहीं जाय है, जासुं या प्रकार सुं डरपे है, कि हौं जितने मार्ग में आयो हुं वितने वाकुं त्याग करवे में मोकुं कहा होयगो, कि जे भगवदीय इतने ही मार्ग में है मेरे निश्चय किये आगे वारे उत्तम मार्ग कुं नहीं जाने है वे मेरे पर हसेंगे कि याने मार्ग कुं त्याग कर दियो है ऐसे कहवे सुं मेरी अप्रतिष्ठा निरन्तर ही बढ़ेगी सो या प्रकार भय कुं आलस्य कुं छांड़ के आगे वारे मार्ग में यदि विचारे तो अवश्य ही वेग ही पुरुषोत्तम श्रीमद गोकुलाधीश प्रभु की प्राप्ति होवे ही होवे और जे तो प्रतिष्ठा वारे है तथा जे प्रतिष्ठा के आश्रय सुं जीवे हैं वे तो वा प्रभु की प्राप्ति सुं ठगे ही है वैसे के वैसे ही रहे है और जो फिर प्रतिष्ठा कू उदय होय रहे आलस्य कुं छांड़ के सर्वोत्तम भगवदीयन सुं मिलके विनके दिखाये आगे आगे वारे मार्ग में विचारेगो सो तो वामें वर्तमान पुरुषोत्तम कुं अवस्य

ही प्राप्त होयगो और जो भगवदीय धर्म सुं कि धन सुं कि अथवा स्त्री पुत्र घर व्यवहार भ्राता बांधव कुटुंब मित्रन सुं कि प्रतिष्ठा अहंकार कि लौकिक इच्छा सुं कि प्रतिष्ठा आदि और हुं वैसे प्रतिबन्धन कुं पायके वा आलस्य आदि कुं नहीं छांड़े, के वा मार्ग में ही रहे सो तो अन्याश्रय नाम वारी सांकल सुं द्रढ़ बांध्यो भयो ही अनंत प्रकार के दुःखन कुं ही पात्र होय है जो तो और सब कुं छांड़ के अपने संबंध कुं ही निरादर करके भगवत संबंध कुं ही मुख्य मान के निरहंकार अत्यन्त उत्तम भगवदीयन सुं मिलके विनके दिखाये मार्ग अलौकिक भावरूप वा वा आगे वारे मार्ग में विचरेगो विचरत ही पीछे होयके उल्लंघन किये मार्ग कुं नहीं देखोगो तो सर्व प्रकार सुं वेग ही वा पुरुषोत्तम कुं प्राप्त होयगो ही यह निश्चय कर सर्वोत्तम ही उपदेश है सो जा भगवदीय में पूर्ण पुरुषोत्तम की संपूर्ण ही करुणा होयगी वाके ही मन में स्थिर होयगो अन्य कुं तो यह उपदेश नहीं रुचेगो ।। श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि श्रीमद गोकुलाधीश महाप्रभुन के श्री मुख रूप क्षीर सागर सुं प्रगट भये वचन रूप अमृत कुं जो प्रेम सुं पान करे है सो वेग ही आलस्य दुर्बुद्धि आदि दोष रूप मरण सुं मुक्त होय जाय है तथा वेग ही या श्री महाप्रभु के चरण कमलन की प्राप्ति सुं कृतार्थता कुं होय है ।।

।। इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख श्रीमदुक्ति मुकामधे चतुर्दश कल्लोले अष्टादश आलस्यादि-दोष निरूपक स्तरंग ।।१८।। सम्पूर्ण ।।

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग ऐकोनविशोयं

श्लोक -- **अथापरमे समये दंड्वत्प्रणिपत्य सन ।**
विज्ञापितो मया श्रीमद गोकुलप्राणनायकः ।।

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि कबहुं और समय में श्रीमद गोकुल के प्राणनायक प्रभुन के आगे दंडवत प्रणाम करके हौं विज्ञापना करतो भयो हुं कि हे महाराजाधिराज महाप्रभो का भगवदीय कुं पुरुषोत्तम की प्राप्ति वेग होय है यह मोकुं आज्ञा करिये सो मेरी विज्ञापना कुं सुनके सो करुणा सागर महाप्रभु जी हंसत हंसत श्री मुखारबिंद सुं आज्ञा करत भये हैं, कि

उत्तम भगवदीय कुं पुरुषोत्तम की प्राप्ति वेग होय है । यह सुनके मैंने तब बड़े आदर सुं फिर विज्ञापना करी कि प्रभो उत्तम भगवदीय तो बहोत है परन्तु विनकुं तो पुरु त्तम की प्राप्ति प्रतीत नहीं होय है यह सुनके श्री गोकुल के अधीश्वर श्री महाप्रभु जी मोकुं आज्ञा करत भये हैं यह उत्तम कहाँ है उत्तम तो अत्यन्त दुर्लभ है जासुं अमुल्य मणी जहां कहां नहीं होय है जिनकुं तुम उत्तम जानो हो वे तो उत्तम नहीं है । तब मैंने प्रणाम करके विज्ञापना करी कि हे महाप्रभो जिनने स्वयं ही महाप्रभुन में सगरे संबंधी सर्वात्मा निवेदन कियो है तथा श्री आपके दर्शन में तत्पर है कि जिनकुं श्री आपकुं नाम तथा सेवा हुं प्राप्त भयी है सदैव ही श्री आपकी उपासना करे हैं हौं तो विनकुं ही उत्तम जानूँ हुं वे काहे कुं उत्तम नहीं है, हे प्राणनाथ जगत प्रभो मोकुं यह श्री आप आज्ञा करे यह सुनके सो सुन्दरवर महाप्रभु जी मोकुं आज्ञा करते भये हैं कि जिनमें उत्तम भगवदीयन के लक्षण प्रतीत होंय है, उनकुं उत्तम भगवदी जानना, यासुं जिनमें वे लक्षण प्रतीत न होय वे कैसे उत्तम भगवदीय जाने जाये, तब मैंने फिर विज्ञापना करी कि हे महाप्रभो वा उत्तम भगवदीय कुं जो लक्षण होय सो मोकुं आज्ञा करिये तब श्री महाप्रभु जी अभिप्राय सहित ही यह उत्तम भगवदीयन के लक्षण कहते भये हैं कि उत्तम भगवदीयन के लक्षण तुम सुनो, कि जो भगवदीय कुं उत्तम जाने तथा अभगवदीय कुं उत्तम भगवदी न जाने सो उत्तम भगवदीय है और जिनकुं तो तुम जानो हो विन में यह लक्षण नहीं है जासुं वे तो भगवदीय कुं उत्तम भगवदीय नहीं जाने है किन्तु अपने कुं उत्तम जाने है सो भगवदीय नहीं है सो तो अधमन सुं हुं अधम अत्यन्त अधम साधारण जीव है जे तो भगवदीय है वे तो और ही है विनकुं तो वे अपने सुं ही नहीं जाने है यदि विनकुं वे उत्तम भगवदीय जाने कि आप कुं अधमन सुं हुं अत्यन्त अधम साधारण जीव मात्र जाने उत्तम भगवदीय न जाने तब ही वे उत्तम भगवदी होवे । जब यह कहयो लक्षण विनमें नहीं है तो वे कैसे उत्तम भगवदीय होवे और यह नहीं है कि बहुत मूढ़ जन जाकुं उत्तम भगवदी कहे वा कहेवे सुं ही वे उत्तम भगवदीय होय है तासुं जब जो भगवदीय सगरे दोषन के शत्रुओं से दीन भावकुं, प्रभुन की कि भगवदीयन की कृपासुं प्राप्त होय है सोई ही उत्तम भगवदीय होय है और जब ही जो जन ऐसो उत्तम भगवदीय होयगो तब सो भगवदीय अवस्य

ही वेग ही परमानन्द मात्र कर पाद मुखोदरादि श्रीमद गोकुलनाथ पुरुषोत्तम कुं प्राप्त ही होयगो ॥ श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि श्रीमद गोकुलाधीश प्रभुन ने या प्रकार अभिप्राय सहित उत्तम भगवदीन कुं जो विचारे है कि सुने है कि पढ़े है सो भगवदीय वेग ही उत्तम होय है और पूर्ण परमेश्वर श्रीजी कुं प्राप्त होय है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख चतुर्दश कल्लोल ऐकोनविशोयं उत्तम भगवदीय लक्षण निरूपक स्तरंग ॥१९॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग विशो

श्लोक -- **कदाचित भगवदीयानां सर्वगुणमेवकर्मादिकं**
भगवते रोचतेऽथवांकिंचिन्न रोचतेऽपि ॥

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि कबहू मैंने एकांत में और मिस सुं श्री महाप्रभुन के आगे विज्ञापना करी कि महाप्रभो भगवदीयन के सगरे ही गुण रूप कर्मादि प्रभुन कुं रुचे है कि विनमें कछु कहुं नहीं रुचे है तथा भगवान के हुं सगरे ही गुण रूप लीलादिक भक्तन कुं रुचे है विनमें कछुक नहीं रुचे है ऐसे या प्रकार की मेरी विज्ञापना कुं सुनके प्राणनाथ श्री महाप्रभु जी हुं प्रसन्नता पूर्वक और मिस सुं ही मोकुं आज्ञा करत भये हैं । भक्तन के सगरे ही गुणरूपादिक प्रभुन कुं रुचे ही है विनमें ऐसो नहीं है जो प्रभुन कुं नहीं रुचे तथा वैसे प्रभुन के हुं सगरे गुणरूपादिक लीलादिक भक्तन कुं रुचे ही है ऐसो कछु नहीं है जो भक्तन कुं न रुचे परन्तु वा भक्तन कुं प्रेम तो प्रभुन कुं अत्यन्त ही रुचे है तथा प्रभुन की वात्सल्यता तो भक्तन कुं अत्यन्त ही रुचे है तो हुं शुद्ध पुष्टिमार्ग संबंधी लक्षणवारे श्रीमद् गोकुलमंडन जो प्रभु शिरोमणी है वे तो वैसे पुष्टि भक्त के श्रम में व्याकुल ही होय है तासुं वैसे भक्तन कुं हुं अपने में प्रेम प्रभुन कुं रुचे हुं नहीं है कि जा प्रेम सुं वे महाप्रभुन की सेवा कुं सर्व प्रकार सुं ही करे है तथा वैसे पुष्टि लक्षणवारे भक्त हुं वैसे महाप्रभुन के परिश्रम में व्याकुल होय है तासुं प्रभुन कुं वात्सल्य अपने में कबहुं भक्तन कुं नहीं रुचे है जासुं जा वात्सल्य सो महाप्रभु अपने भक्तन के

सगरे ही मनोरथन कुं सिद्ध करे है यह अत्यन्त ही योग्य है तासुं वा महाप्रभुन कुं वैसे भक्तन के परिश्रम में अत्यन्त ही द्वेष है जासुं श्री महाप्रभु जी वा भक्तन ने करि अपनी सेवा कुं विनके परिश्रम रूप सुं जब जाने है तब तो वा सेवा में कि वा सेवा के कारण में कि वा भक्तन के वैसे प्रेम में प्रभु प्रसन्न हुं नहीं होय है प्रत्युत द्वेष ही करे है और जब तो वा सेवा कुं परमानन्द रूप जाने है तब तो वा सेवा में कि वाके कारण में कि विनके प्रेम में महाप्रभु जी अत्यन्त प्रसन्न होय है तथा वैसे पुष्ट भक्त कुं हुं वा महाप्रभु शिरोमणी श्रीजी के वैसे परिश्रम में निरन्तर ही विद्वेष होय है तासुं जब वे भक्त या महाप्रभुन ने किये अपने सगरे कार्यसिद्धि कुं प्रभुन की परिश्रम रूप जाने है तब तो वा कार्यसिद्धि में कि वाके कारण में कि वा महाप्रभुन के वैसे वात्सल्य में हुं वे भक्त प्रसन्न नहीं होय है किंतु द्वेष ही करे है और जब तो वा कार्य सिद्धि कुं परमानन्द समुह को कारण रूप जाने है तब तो वा कार्यसिद्धि में कि वाके कारण में कि वा महाप्रभु के वात्सल्य में अत्यन्त ही वे प्रसन्न ही होय है ।। श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि श्री गोकुलाधीश महाप्रभुन के या वचनामृत परंपरा कुं कानरूप अंजुली सुं जो बुद्धिमान पान करे है कि विचारे है सो वा आनन्द सागर श्री महाप्रभु जी में शुद्ध प्रति कुं प्राप्त होय है ।।

।। इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख श्रीमदुक्ति मुकामधे चतुर्दश कल्लोल विशो भगवद भगवदीय रूच्यरुचि निरूपक स्तरंग ।।२०।। सम्पूर्ण ।।

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग ऐकवीशः

श्लोक -- **कदाचित्खर्कु परमकारुणिकः प्राणनाथो मंदमंदस्मितेन श्रीमता मुखचंद्रेण पीयुषधारासेके मनु गामिनियः प्रणत सप्रणयमवोचत ।।**

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि परम दयालु प्राणनाथ जी कबहु मंदमंद मुस्कित श्री मुख चन्द्र सुं सदा अनुकूल मुझदास में अमृत की वर्षा करत ही प्रेमपूर्वक आज्ञा करते भये हैं कि इहां श्रीमद सुन्दरीन कुं जो प्रिय

श्री पुरुषोत्तम श्रीजी है सो जासुं वैसी भ्रूलता की लीला विलास की किणका सुं ही तीनों जगत की उत्पत्ति स्थिति प्रलय कुं करे है तासुं सबन सुं ही प्रबल है तथा जासुं वा श्रीजी की कृपा कुं विशेष पात्र है कि सगरे भक्त समुह हुं जाके चरण कमल संबंधी पराग के किणका कुं हुं प्रणाम करे है तासुं ऐसी श्री परकीया स्वामिनी जी सबन सुं ही प्रबल है सो स्पष्ट दिखावे है कि कबहू प्रिया प्रिय दोनों ही आपस में उछल रहे प्रेम विशेष सुं रमण कर रहे हते तब लीला मंदिर के पास सास आदि गुरुजन कुं यहां आवतो भयो जानके प्रियाजी की प्रिय सखी ने संकेत सुं प्रियाजी कुं जतायो तासुं वहां बिराजमान श्री स्वामिनी जी डरके वहाँ सुं चली जाती भयी है तब अकेले प्राणनाथ जी श्रीजी तो वा प्रियाजी में जो प्रेम है सो तो या प्रकार के रसरूप समय में तो प्रियाजी मोकुं क्षणमात्र हुं सर्वप्रकार सुं ही नहीं त्याग करेगी ऐसो पूर्ण विश्वास वारो है जाकी महिमा वचनन में नहीं आय सके है तथा परमकाष्ट्यापन्न है कि सर्व सुं उत्कृष्ट है तासुं प्रथम जैसे ही वा प्रियाजी कुं प्रिय के संग वैसे ही वा प्रिय जी कुं प्रियाजी संग वैसे रमण परायण ही दिखाय रहयो है ऐसे वा प्रेम सुं वा रमण समय के आनन्द समुद्र संबंधी ऊचे तरंगन में चढ़ायवे कुं कछु कछु नहीं जानते भये हैं उलटो अपने सुन्दरता आदि गुण समूह के किणका सुं निरादर करी कि प्रिय तो महासुन्दर वर है महागुण सागर है मेरे में तो कछु नहीं है ऐसी वा प्रियाजी कुं अपने विशेष प्रसर रहे प्रेमसागर में निमग्न करवे अर्थ प्रिय श्रीजी वा प्रिया जी के वा रहस्य लीला के महासुन्दर मनोहर गान कुं प्रारंभ करते भये हैं वा गान सुं वा प्रिय के प्रेम सागर में डूबवे के योग्य कंप रोम हर्ष सुं शोभायमान मनोहर स्वरूप वारी या कोमलांगी प्यारी जी कुं प्रसन्न करत रमण हुं करत भये हैं तथा सो प्यारी जी हुं रस के आवेश सुं पुरुष भाव कुं अंगीकार करके प्रिय के करोड़न मनोरथन सुं स्पर्श योग्य नहीं है लेश हुं जाके, ऐसी अनिर्वचनीय परमानन्द रूप विपरीत रमणलीला कुं प्रेम सहित करत ही प्रिय कुं विशेष ही प्रसन्न करती भयी है ऐसे एक प्रकार सुं दिखाय के अब दूसरो प्रकार दिखावे है कि या प्रकार कबहू और समय में यह प्रिया प्रिय बिहार कर रहे, तब और प्रिया जी वाकी सोत हैं वाकुं सहन नहीं भयो तासुं वा सोत की सखी ने मार्ग में जैसे चोर मारवे कुं तैयार भयो होय तब बूढ़ो ब्राह्मण

जैसे पुकारे है वा प्रकार की पुकार को प्रकट किये कि मार गयो मार गयो मैं बूढ़ो ब्राह्मण हुं मोकुं बचाइयो बचाइयो या प्रकार कुं सुनके बड़े करुणाल प्रियतम श्रीजी हृदय में बड़ी करुणासुं वाके वचायवे की अभिलाषा सुं वा रमण स्थल में रमणानंद कुं अनुभव कर रही प्रिया कुं छांड़ के वा संकेत स्थल सुं वेग ही वहां चले जाते भये हैं तब वा प्रियाजी कुं जो वा प्रिय में वैसो अनिर्वचनीय प्रेम है सो तो प्रथम जैसे ही वहां विराजमान ही प्रिय कुं अनुभव कराय रह्यो है कि वा प्रेम सुं प्रियाजी प्रिय कुं अपने निकट वैसे रमण कर रहे ही जाने है तासुं वा समय के सुख समुद्र के बड़े कल्लोल वारे हिंडोरा में ही झूल रही है तासुं वा प्रिय के अन्त पधारवे कुं कछू हुं नहीं जानती भयी है उलटे याकी तो सखी जाने है कि प्रिय तो ऐसे रसमय समय में हुं याकुं छांड़ के चले गये हैं यह जानके या अपनी स्वामिनी कुं अत्यन्त उत्कंठा वारी मानके कहे है आर्य मुग्धे, सगरो समय ऐसे भोरेपन सुं ही गुजारोगी कहा, या कठिन कठोर प्रिय में अब कोमलता छांड़ देओ सावधान होय जाबो मन में धैर्य बाँध अब मान मनाय जा मानसुं तेरी सोत तो प्राणनाथ सुं बड़े मान आदर सत्कार कुं प्राप्त भयी है तथा प्राप्त होय हुं रही है ऐसे या प्रकार की अपनी सखी की वार्ता सुनके सो स्वामिनी जी तो भय सहित ही धीरे-धीरे ऐसे कहे हैं कि हे सखी तिहारो मेरे में प्रेम विशेष है तासुं मेरे पक्ष करवे में तत्पर है तासुं तेरे नयन नहीं है का, मेरे समीप ही प्रेम विशेष सुं ही मेरे संग रमण कर रहे निरपराध मेरे प्यार कुं देखे नहीं है का, जासुं ऐसे विना समय अयोग्य बचन आलाप करे है ऐसे स्वामिनी जी कहें है । तब अपनी प्यारी सखी के समय बिना अयोग्य वचन के कहवे सुं प्रायः कुपित होय रहे कि रूठ रहे प्राणनाथ कुं मनावती भयी है तब मनायवे सुं अधिक आनन्द सुं विशेष आलिंगन चुंबनादि सुं प्राणनाथ कुं कृतार्थ हुं करती भयी है कि तब वा प्रिय सुं प्राप्त भयो जो अपने मनोरथन सुं हुं अतीत जो प्रभुन कुं प्रसाद, कृपा विशेष है, जो प्रिय के मनोरथन सुं हू, अतीत लीला विशेष कुं विस्तरित कर रह्यो है । ऐसे वा कृपा विशेष सुं वा प्रिय प्राणनाथ कुं आनंदित हुं करती भयी है । ऐसे दूसरे प्रकार कुं दिखाय के अब तीसरे प्रकार कुं दिखावे हैं कि ऐसे कबहू और समय में प्राणनाथ श्रीजी श्री स्वामिनी जी के संग उछलित प्रेम विशेष सुं रमण कर रहे है तब वा प्रिय की मनोहर गती

सुं कि मनोहर बचन सुं कि मनोहर द्रष्टि विशेष सुं कि अमृत सुं महा मधुर मंदहास्यन सुं कि तथा सगरे महासुखन कुं दान कर रहे अत्यन्त गाढ़ आलिंगन सुं श्री स्वामिनी जी करोड़न समुद्रन सुं विस्तारवारी वा प्रिय के अर्थ अत्यन्त उत्कंठा विशेष रूप प्रेम रूप तृष्णा अत्यन्त ही बढ़ जाती भयी है तब वासुं तृष्णा विशेष सुं निर्मल कमलदल कुं विजय करवे वारे अपने अत्यन्त विस्तारवारे नयनन सुं वा प्रिय प्राणनाथ के वैसे स्वरूप कुं वैसे वा रमण कू न देखत ही हा नाथ, हा रमण श्रेष्ठ कहाँ पधारे हो हा महाभुज हौं तो तिहारी दासी हुं, हे सखे मोकुं अपनो दर्शन निकट ही कराओ, इत्यादि प्रकार सुं विलाप करत-करत एक स्थान सुं दूसरे स्थान में कि ऐक बन सुं दूसरे बन में वा प्रिय के संग ही आलिंगन करी भयी ही भ्रम रही है सो क्षण तो कोकिला कुं कि चकइ कुं कि मलय चंदन कुं कि चंद्रमा कुं कि चांदनी कुं कि यमुना कुं कि मेघ कुं कि पर्वत कुं हुं उन्माद सुं वा प्रिय के अर्थ पूछ रही है और प्रिय श्रीजी हुं आश्चर्य होय रहे है तामें सगरी सखीजन देख हुं रही है तासुं प्राणनाथ जी अपने में ही हंस रहे हैं तासुं कछुक काल उपेक्षा ही कर रहे हैं ऐसे कछुक काल पर्यंत सो श्री स्वामिनी जी वा प्राणनाथ के विरह कुं ही अनुभव करती भयी है वा संग बिराजमान हुं प्रिय कुं अनुभव नहीं करती भयी है ऐसे तीसरे प्रकार कुं दिखाय के अब चतुर्थ प्रकार कुं दिखावे है कबहुं और समय में प्राणनाथ प्रियतम के संग प्राणप्रिया जी रमण कर रही है तब स्वामिनी जी को श्री अंग है सो सुन्दरता सुं परार्द्धन करोड़न रति कुं हुं विजय करे है और श्रीमुख है सो करोड़न पूर्ण चन्द्रमान कुं हुं तृण जैसे तुच्छ करे है और अधर पल्लव है सो जा पर हजारन अमृतन की माधुरी समुह न्यौछावर किये है और उचे जे कुचयुग्म हैं सो असंख्यात सुवर्ण के युगल पर्वत की उछलित शोभावारे है तथा भुज युगल है सो निर्मल मृणाल कमल कंद सुं हुं परम कोमल है वैसे और हुं जे श्री अंग है वे हुं सगरे श्रेष्ठ लक्षण वारे है ऐसे सो प्रिया जी कुं जो श्री अंग है सो अपने मनोहर वा वा अंग सुं श्री प्राणनाथ के हृदय में प्रवेश करके वामें हजारन समुद्रन सुं हुं विशाल तथा वड़वाग्नि सुं हुं करोड़न गुणो विशेष ताप कुं देवेवारी प्रेममयी तृष्णा ही बढ़ाय दीनी है यद्यपि सो प्रिया जी प्रिय के निकट बिराजमान हुं हैं अत्यन्त निकट हुं हैं और अपने दर्शनामृत के सार सुं अपनी सखीजनन कुं न्हवाय हुं रही

है तथा वाके संग रमण हुं कर रही है तो हुं तब ही प्रियतम श्रीजी के सगरे विचार कुं तब ही लोप करके सो तृष्णा ही तब ही प्रिय श्रीजी के प्रति वा प्रिया कुं तिरोधान ही कर देती भयी है कि प्रियाजी के सौंदर्यामृत रस के पान की तृष्णा विशेष सुं निकट बिराजमान हुं प्रियाजी कुं अपने निकट नहीं जाने है यह भाव है तामें यद्यपि प्राणनाथ के आलिंगन सुं अत्यन्त प्रसन्न होय रही प्रिया के अत्यन्त प्रसन्न होय रहे सुन्दर श्री मुखारबिंद के दर्शन सुं सगरी सखीजन हुं तो प्रफुल्लित श्री मुखारबिंद वारी होय रही है तो हुं क्षण-क्षण में अत्यन्त बढ़ रहे वा प्रियाजी के वियोगाग्नि की ज्वाला समुह सुं अत्यन्त दुग्ध होय रह्यो है धैर्य समूह जाकुं ऐसे सो प्रिय श्रीजी तो, हे प्रिये कहां पधारी हो, मेरे नयन की सरलता कुं चुराय के काहे कुं विस्मय में ही छिप गयी हो, यह तो मिलवे को समय है छिपवे को तो नहीं है तिहारे विना तो मेरो संसार हुं असार है दशो हुं दिशा शून्य है सगरो हुं लोकप्रकाश शून्य है तीनों भुवन अन्धकारमय है आयुः ही निष्फल है दीर्घ लोचनवारी प्यारी दर्शन दीजिये अपने आलिंगगन रूप रस प्रवाह सुं मेरे देह के तथा भींतर के ताप कुं शांत करिये ऐसे या प्रकार सुं बारंबार आलाप करते भये हैं और प्रियाजी की जे प्रिय सखीजन है वे तो हे महाप्रभो तुमतो अपने अखंड्ति ज्ञान सुं शेषनागादि को हुं हीन करवे वारे हो कि महापूर्णज्ञान वारे हों, तामें हुं यह तिहारी प्राणप्रिया जी तो अपने स्वरूप सुं सदैव ही तिहारे निकट ही कि तिहारे पर्यंक कुं कि श्री अंग कुं कि हृदय कुं हुं अलंकृत कर रही है तामें आज तो विशेष सुं ही वैसे अलंकृत करे है कि आपके संग ही बिराजमान है तो हुं वा प्राण प्रिया स्वामिनी जी कुं अपने निकट न जानके आप तो वृथा ही वियोगाग्नि कुं आदर कर रहे हौ ऐसे या प्रकार सुं कहे रही है विनके या प्रकार के वचनन कुं तो वा प्रियाजी के वियोग सुं प्रकट भये उन्माद के प्रलाप रूप सुं कि ऐसो मैं ही कह रह्यो हुं, ऐसे मान के निरादर ही करते भये हैं कि वाकुं नहीं मानते भये हैं सो या प्रकार सुं संक्षेप सुं चार प्रकार की लीला दिखायी है तामें प्रथम कही लीला में रमण मंदिर सुं यद्यपि श्री स्वामिनी जी बाहिर हुं पधार गयी है वाकुं न पधार के समय में ही विचार के तो हुं प्राणनाथ कुं जो स्वामिनीजी में प्रेम है जो वा श्री स्वामिनी जी सुं हुं बड़ो है प्रबल है सो प्रेम ही वा प्राणनाथ के प्रति वा स्वामिनी जी कुं आदर

पूर्वक प्रथम जैसे ही बिराजमान कर देतो भयो है तथा दूसरी लीला में तो वा रमणस्थल सुं बाहिर प्राणनाथ ही पधार गये हैं तोहुं वाकुं विचार के वा समय में ही वा स्वामिनी जी कुं जो प्राणनाथ में प्रेम है जो प्राणनाथ सुं ही प्रकट ही प्रबल है सो प्रेम ही जैसे प्रथम ही प्राणनाथ रमण करत अनुभव में हते वैसे रमण करत ही वा प्रिया जी के पास प्राणनाथ कुं विराजमान कर देतो भयो है और तीसरी लीला में तो वा रमण मंदिरादि में प्राणनाथ बिराजमान हुं है वा बिराजवे के समय में हुं वाकुं न गिनके प्राणप्रिया स्वामिनी जी के प्रति जो वैसे प्राणनाथ कुं तथा वा लीला कुं जो दर्शन न होवनो है जासुं हा नाथ, हा रमण श्रेष्ठ, इत्यादि वचन प्रकट भये हैं सो ऐसी द्रढ़ प्रीति तो प्राण प्रिया में जो प्राण, प्रभु श्रीजी के अर्थ है जो प्रथम कहे श्रीजी सुं हुं प्रबल है सो बात हमने ही प्रकट करी है तथा चतुर्थ लीला में तो यद्यपि रमण मंदिर में श्री स्वामिनी जी विद्यमान हुं है सो वाकुं न गिनके वा बिराजवे के समय हुं वाकुं तथा बाकी लीला कुं जो दर्शन न होवनो है जामें हा प्रिये कहाँ पधारी हो इत्यादि प्रकार की अवस्था तथा वचन हुं प्रकट भये हैं सो प्राणनाथ में प्राण प्रिया के अर्थ जो तृष्णा है जो प्राणप्रिया सुं हुं प्रबल है सो वा तृष्णा ने ही प्राणनाथ में सो प्रतीति दृढ़ करी है तामें ऐसे हुं संदेह नहीं करनो कि यदि ऐसी प्रतीति दृढ़ होय है तो कछुक काल पीछे वा लीला में फिर संयोग कि वियोग हुं न भयो चहिये तहां यह जाननो कि यह उत्साह तथा तृष्णा है यह तो क्षण-क्षण में फिर जानो व्यभिचारी भावरूप है स्थायी भाव नहीं है तासुं वैसे विश्वास तृष्णा के दूर होयवे सों फिर संयोग वियोग होवनो युक्त है । श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि या प्रकार सुं श्री गोकुलाधीश प्रभुन ने जो यह प्रेम कुं पराक्रम वर्णन कियो है याकुं जो प्रेम सुं चिन्तन करे है कि पढ़े है कि वर्णन करे है सो जन वा प्रभुन कुं कृपापात्र होय ही है कि वाकुं प्राणनाथ जी, सो प्रेम आदर पूर्वक ही आलिंगन करे है तब या प्रिया प्रिय की जो रसलीला है जाकुं किणका हुं ब्रह्मादिकन कुं हुं दुर्लभ है ऐसी वा रसलीला में याकुं प्रवेश होय है सो तो सबन सुं ही विशेष ही सर्वोपर ही होय जाय है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया रससिंधौ श्रीमुख श्रीमदुक्ति मुक्तामधे चतुर्दश कल्लोल ऐकवीश प्रेम-पराक्रम निरूपक रत्तरंग ॥२१॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग द्वावीशोः

श्लोक-- **ननु श्रीगोकुलाधीशस्यैव प्राप्तौ कुतस्तदीयाना बिलंबो बतजायते।**

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि फेर कबहुं मैंने वा प्रभुन की प्राप्ति कुं उपाय मिस सुं प्रश्न कियो कि हे श्री गोकुलाधीश महाप्रभो श्री गोकुलाधीश प्रभुन की प्राप्ति में भगवदीयन कुं विलंब का कारण सुं होय है या प्रकार प्रश्न कर रहे मोकुं हंसत हंसत ही श्री महाप्रभु जी तब वैसे मिस सुं चतुरता पूर्वक आज्ञा करते भये हैं कि यदि भगवदीयन के किये उपकार कुं भगवदीय बहुत माने और गमावे नहीं तो अवस्य ही वेग ही वा प्रभुन कुं प्राप्त होय जाय, परन्तु वे तो वा उपकार को बहुत माने नहीं है और लोप ही करे हैं कि जाने हुं नहीं है तासुं विनकुं वा प्रभुन की प्राप्ति में बिलंब हुं होय है। तब फिर हुं मैंने प्रेम सुं वा कृपासागर महाप्रभुन कुं बारंबार प्रणाम करत और नयन सुं हर्ष आंसुन की वर्षा करत विनय करत भयो हुं कि हे करुणासिंधो हे भगवान भक्तवत्सल्य महाप्रभो भगवदीयन को ऐसो को उपकार है जाकुं यह नहीं माने है उलटे लोप करे है कि नहीं जाने है यह मेरे आगे स्पष्ट करके कहिये। तब सुन्दर शिरोमणी श्री महाप्रभु जी मोकुं आज्ञा करत भये हैं कि भगवदीयन सुं लौकिक शरीर स्त्री आदि कुं, कि अलौकिक श्रेष्ठ बुद्धि आदिकन कुं जो लेनो है सो लेवे वारेन कुं उपकार है और देवे वारो भगवदीय, भगवदीय के प्रति वा वा वस्तु को जो दान है वाकुं आ दान जैसे कि लेवे जैसे बहुत नहीं माने है उलटे वाकुं अवस्य ही लोप ही करे है॥ श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि तब फेर ही मैंने चौदह भुवनों के प्रभु श्रीजी सुं विज्ञापना करी है हे प्राणनाथ श्री गोकुलेश्वर महाप्रभो लेयवे कुं श्री आप उपकार रूप सुं, दान जैसे कैसे आज्ञा करे है तब अत्यन्त अनुरागी अपने भक्त मों दीन के या वचन कुं सुनके सो दीन-बांधव श्री गोकुलपति भगवान आज्ञा करे है, कि या प्रकार सुं ऐसे कहुं हुं कि दान है सो आ दान में पर्यवसान होय कि फले है तामें दान है सो उपकार नहीं है आदान है कि लेयवो है सो उपकार है जासुं जो भगवदीय भगवदीयन के प्रति जो कछु लौकिक अत्यन्त बहुत हुं वस्तुदान करे है सो वे दाता भगवदीय वा लेवेवारे भगवदीय सुं कि

प्रभुन सुं वा दान किये वस्तु सुं अत्यन्त अधिक सुं हुं अधिक प्राप्त होय है तासुं सो दान कुं देनो तो लेयवे में ही फले है न के दान में, जासुं जो कछु प्राप्त होयगो वासुं दान तो अत्यन्त ही तुच्छ हतो, थोड़ो हतो कि और जे भगवदीय तो वा भगवदीयन सुं अत्यन्त बहुत हुं वा वा वस्तु कुं लेवे है वासुं हुं अत्यधिक अधिक ही देवे है कि प्रभुन सुं विज्ञापना द्वारा कि साक्षात् दिवावे है, यासुं लेयवे में फल है जासुं दान योग्य वस्तु सुं सो लाभ योग्य वस्तु है सो अत्यन्त ही थोरी होय है कि तुच्छ होय है या प्रकार सुं भोजन लिवायवे सुं, भोजन लेनो कि सेवा करवे सुं सेवा करायवो उपकार है वैसे और हुं जाननो, ऐसे देवे वारे सुं लेयवेवारे कुं भोजन करायवे वारे सुं भोजन करवे वारे कुं ही बड़ो उपकार ही विचारनो या प्रकार सुं ज्ञान तो प्रभुन ने दान करी अलौकिक द्रष्टिवारेन कुं ही होय है वा अलौकिक दृष्टि बिना नहीं होय है यासुं दाता आदि जे लेवे वारे आदिकन कुं निरादर करे है बहुत आदर नहीं करे है सो अलौकिक दृष्टि रहित होयवे सुं ही कि वा लेयवे आदि की विशेषता सुं कि अज्ञान सुं ही है तासुं ही वा भगवदीयन कुं हुं श्री गोकुलेश महाप्रभुन की प्राप्ति में बिलंब होय है और जब तो वे भगवदीय वा लेयवे वारेन कुं कि बिनके लेयवे कुं अलौकिक दृष्टि सुं ही बहुत माने है और अपने कुं तथा अपने दानादि कुं हुं थोरो कि तुच्छ जाने है तब तो वेग ही वा प्रभुन कुं अवस्य ही प्राप्त होय है श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि या प्रकार महाप्रभुन ने वर्णन किये बिन लेयवे वारेन के उपकार कुं जो चिंतन करे है कि पढ़े है कि सुने है सो अलौकिक दृष्टि कुं प्राप्त होय है कि वा उपकार कुं विशेष मान ही, श्री गोकुलेश्वर वर महाप्रभुन कुं प्राप्त होय है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख श्रीमदुक्ति मुक्तामधे चतुर्दश कल्लोल द्वावीशो भक्तोपकाराधिका निरूपक स्तरंग ॥२२॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग त्रयोवीशोः

श्लोक -- **समयांतरे मयेइश्वरेश्वर इत्यं विज्ञापयत ।**

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे हैं कि कबहुं और समय में इश्वरेश्वर प्रभुन के आगे या प्रकार सुं हौं विज्ञापना करत भयो हुं कि हे महाराजाधिराज हे प्राणनाथ महाराजाधिराज श्री मुख्य स्वामिनीजी के संग भगवान पुरुषोत्तम श्री गोकुलपति कुं वियोग कैसे संभवे है जा वियोग में श्री मुख्य स्वामिनी जी कुं बड़े दुःखन कुं अनुभव होय है प्रियतम श्री महाप्रभु जी तो परम दयालू है वाकुं काहे कुं दुःख उत्पन्न होयवे देवे हैं, तथा प्राणनाथ श्री महाप्रभुन में हुं सहन के अयोग्य बड़ो दुःख नहीं होय है का, अपितु सहन के अयोग्य बड़ो दुःख होय है और श्री मुख्य स्वामिनी जी हुं प्रभु जैसे दयालू है और समर्थ हुं है यासुं वियोग कुं कैसे दुख उत्पन्न होयवे देवे है वैसे और हुं है कि या प्रियतम कुं तो अपनो दुःख दुःख नहीं है किंतु वा स्वामिनी कुं दुःख ही अपनो दुःख होय है वैसे श्री स्वामिनीजी कुं हुं अपनो दुःख दूःख नहीं है किंतु वा प्रियतम कुं दुःख ही अपनो दुःख होय है यासुं प्रियतम की सो प्रियाजी वा वियोग कुं काहे कुं होयवे देवे है और संयोग है सो तो परमानन्द स्वरूप है वामें वा प्रियतम कुं कि प्रियाजी कुं तृप्ती तो लेश मात्र हुं नहीं होय है उत्तरोत्तर अधिक अधिक उत्कंठा ही बढ़े है सो प्रियतम कि प्रियाजी वा संयोग कुं काहे कुं दूर करे है वैसे और हुं है कि प्राणनाथ कुं अपनो सुख सुख नहीं है किंतु प्रियाजी कुं सुख है सो अपनो सुख है ऐसे प्रियाजी कुं हुं अपनो सुख सुख नहीं है किंतु प्राणनाथ कुं सुख ही अपनो सुख होय है यासुं सो प्रियतम कि प्रियाजी वा संयोग कुं काहे कुं दूर करे है वियोग तो या दोनों प्रिया प्रिय कुं नहीं रुचे है ऐसो और को है जो वा वियोग कुं प्रगट करवे में समर्थ होय और संयोग तो दोनो कुं ही रुचे है ऐसो और को हे जो वा संयोग कुं निकारवे में समर्थ होय है, सवन सुं तो यहाँ प्रिया जी और प्रियतम दोनों हुं प्रबल है, समर्थ है और तो जो कछु है सो इन दोनोंन के आधीन दास है तासुं इनके प्रतिकूल करवे में समर्थ होय शके, तासुं हे महाराज, परम दयालो, यह मेरे हृदय में भारी ही संशय रहे है श्री आप

करुणासागर श्रीमद गोकुल नागर श्री महाप्रभु जी मंदहास्य वारे श्री मुखचंद्र सुं मोकुं आज्ञा करत भये है, कि श्री परमेश्वर श्रीजी मुख्य धर्मी है सो यह सबन सुं ही प्रबल है और श्री मुख्य स्वामिनी जी, जो वा श्रीजी के भक्तन में हुं और सगरे अपने धर्म व स्नेह के आधीन किये और सो प्रिया प्रिय तो श्रृंगार रस लीला में ही प्रवृत्त भये हैं याके अनन्तर जब प्रिया प्रिय में परमानन्दमय संयोग रस अत्यन्त बढ़वे लाग्यो, तब वा कृपा ने प्रेम सुं ऐसे विचार्यो कि प्राणनाथ महाप्रभुन ने मोकुं सब प्रकार की सेवा सोंपी है, तामें अब दोनों प्रिया प्रिय में संयोग रस अत्यन्त बढ़यो है ऐसे बढ़त ही जब दोनोन के भीतर बाहिर एक रस ही व्याप्त होय जायगो तब दोनों की एकता सिद्ध करत स्वरूप कुं ही अंतर्ध्यान कर देगो, जैसे बाहिर भीतर अत्यन्त बढ़ी सर्दी कमल आदि के स्वरूप अंतर्ध्यान करे है या प्रकार स्नेह हुं प्रेम सुं विचार तो भयो है कि श्री मुख्य स्वामिनी जी ने मोकुं सगरी सेवा कुं अधिकार सोंप्यो है ऐसे सो दोनों कृपा और स्नेह मिलके संयोग कुं क्रम सुं दूर कर देते भये हैं और वाके स्थल में विप्रयोग कुं स्थिर कर देते भये हैं और जब तो सो विप्रयोग क्रम सुं अत्यन्त बढ़वे लग्यो तब कृपा ने प्रेम सुं ऐसे विचार्यो कि ऐसे बढ़ रह्यो यह विप्रयोग जब प्रिया प्रिय के बाहिर भीतर प्रसर जायगो तब अपनी ज्वाला सुं दोनों के स्वरूप कुं ही अंतर्ध्यान कर देवेगो, जैसे बाहिर भीतर बढ़यो अग्नि काष्ट के स्वरूप कुं छिपाय देवे है और या प्रकार स्नेह ने हुं ऐसे विचार कियो तब वे दोनों कृपा स्नेह ने हुं ऐसे विचार कियो तब वे दोनों कृपा स्नेह मिलके क्रम सुं वा विप्रयोग कुं दूर कर देते भये हैं तासुं वा दोनों प्रिया प्रिय के स्वरूप रक्षारूप सेवा के लिये तत्पर जे कृपा और स्नेह है सो संयोग वियोग के मध्य में जाकुं ही अत्यन्त बढ़तो देखे है तब क्रम सुं वाकुं दूर करके वाके ठिकाने दूसरे कुं स्थिर करे हैं, जासुं प्राणनाथ तथा प्रिया स्वामिनी जी ने वा कृपा स्नेह कुं ऐसी अपनी सेवा को अधिकार सोंप्यो है तासुं वे कृपा स्नेह ही वा सेवा कुं करे हैं यासुं प्रियतम श्रीजी की प्रियतमा मुख्य स्वामिनी जी हुं तथा वा दोनों के और सगरे धर्म हुं या कृपा स्नेह की आज्ञा कुं उल्लंघन नहीं करे है प्रत्युत सदैव ही अनुकूल ही चले है यासुं ही या प्रिया प्रिय की निस्तुष निमर्याद सों श्रृंगार रसलीला निरन्तर प्रसरे है श्री कल्याण भट्ट जी कहे हैं कि या प्रकार प्रभुन के कहे कृपा

और स्नेह के पराक्रम कुं जो प्रेम सुं हृदय में विचारे है कि सुने है कि पढ़े है सो वेग ही प्रभुन की कृपा सुं सदा महा आनन्द परमानन्द रूप प्रभुन की लीला में प्रवेश कुं प्राप्त होयके सदैव ही अत्यन्त प्रसन्न होय है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख श्रीमदुक्ति मुकामधे चतुर्दश कल्लोल त्रयोवीशोः तरंग कृपा स्नेह पराक्रम निरूपक स्तरंग ॥२३॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग चतुर्वीशोः

श्लोक -- **कदाचितः गोकुलाधीशः संपूर्ण पुरुषोत्तमः**
संघ समयमानेन मामुवाच मुखेंदुनाः ।

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि सम्पूर्ण पुरुषोत्तम श्री गोकुलाधीश महाप्रभु जी मंदहास्य वारे श्री मुख चंद्र सुं कबहु दयापूर्वक मोकुं आज्ञा करत भये हैं कि बहुत उत्कृष्टन सुं उत्कर्ष कुं प्रकाश करवे वारो जो वचन है सो स्तुति है जैसे वेदन सुं तुम समर्थ हो इत्यादि जो कथन है सो स्तुति है वैसे एक वेद सुं कि दोय वेदन सुं हुं सो स्तुति होय है वैसे सगरे वेदन सुं जो वैसी स्तुति है सो अत्यन्त स्तुति है सो तो श्री पुरुषोत्तम श्री गोकुलाधीश के अवतारन में हुं घटे है श्रीमद गोकुल प्राणनाथ प्रभुन में सो निंदा ही है जासुं सो सगरी स्तुति अत्यन्त स्तुति मिलके वा श्रीमद गोकुल प्रभुन के श्री चरणारबिंद के संबंधी रेणु कण सुं ही अत्यन्त अपकृष्ट है जासुं सो महाप्रभुन के उत्कर्ष कुं प्रकाश नहीं करे है तासुं वाकी स्तुति पदवी में नहीं चढ़ सके है तो अत्यन्त स्तुति रूप कैसे होय शके है जैसे ब्राह्मण श्रेष्ठ को तुम चांडाल सुं पवित्र हो या प्रकार कुं कहेनो स्तुति नहीं है जासुं चाडाल वासू अत्यन्त ही नीच है अथवा चक्रवर्ती को तुम गामड़े के राजा सुं बड़े हो यह कहेनो स्तुति नहीं है वैसे ही श्री गोकुलेश प्रभु सबन सुं अधिक है ऐसे कहेनो हुं श्रीमद् गोकुल प्रभुन की स्तुति नहीं है सो तो निंदा ही है ऐसी तो अवतारन की स्तुति होय है श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि तब मैंने विज्ञापना करी कि श्रीमद गोकुलेश प्रभुन की स्तुति कहा है तथा अत्यन्त स्तुति हुं कहा है यह सुनके श्रीमद

गोकुल के पूर्णचन्द्र श्री महाप्रभु जी हर्ष सहित ही मोकुं आज्ञा करत भये है कि श्री गोकुलाधीश प्रभुन ने श्री मुख्य स्वामिनी जी कुं जो अपने सुं हुं विशेष कियो है वाकुं जो वर्णन कि प्रकाश करनो है सो ही वा प्रभुन की स्तुति है कि अत्यन्त स्तुति है वाकुं दिखावे है कि यद्यपि श्री पुरुषोत्तम सर्व समर्थ हुं है तो हुं और पुरुषोत्तम कुं बनायवे में समर्थ नहीं है ऐसो हुं होयके सो महाप्रभु जी जो वा श्री मुख्य स्वामिनी जी कुं सबन सुं विशेष कि अपने सुं हुं विशेष कियो है सो यह महाप्रभुन की परम उत्कृष्टता है या उत्कर्ष कुं प्रकाश करनो ही स्तुति की अत्यन्त स्तुति होय है तब फेर ही मैंने विज्ञापना करी कि का गुणन सुं श्री मुख्य स्वामिनी जी कुं प्रभुन ने अपने सुं ही विशेष कर दियो है सो गुण मेरे प्रति आज्ञा करो। या विज्ञापना कुं सुनके तो प्राणनाथ जी आज्ञा करत भये हैं कि जासुं पुरुषोत्तम सर्व प्रकार सुं ही वाके आधीन है और पुरुषोत्तम की सो सर्वस्व है तथा पुरुषोत्तम ही वाके सर्वस्व है तथा प्राणरूप है तथा ऐक पुरुषोत्तम ही वाके पति है तासुं इत्यादि बहुत प्रकार के गुण जे पुरुषोत्तम में हुं नहीं है वा मुख्य स्वामिनी जी में अनन्त ही वे गुण है तासुं पुरुषोत्तम ने वाकुं अपने सुं ही महा उत्कृष्ट कियो है श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि या प्रकार महाप्रभुन ने वर्णन किये श्री मुख्य स्वामिनी जी के गुणन कुं जो प्रेम सुं चिंतन करे है कि पढ़े है कि सुने है सो ब्रह्मादिकन कुं हुं दुर्ल्लभ है किणका हुं जाके, ऐसी महा परमानन्द रूप प्रिया प्रिय की रसलीला में वेग ही प्रवेश कुं प्राप्त होय है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख श्रीमदुक्ति मुक्तामधे चतुर्दश कल्लोल चतुर्वीशोः मुख्य स्वामिनी जी गुण निरूपक स्तरंग ॥२४॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग पंचवीशस्तद्रु

श्लोक-- **नत्वानंदमात्र करपाद मुखोदरादि: पुरुषोत्तमस्य गुणरूप लीला चर्चा कृतः।**
केभ्यश्चिन्नरोचते अवतारणां रोचते परेषां पुन रोचतेतरा इति मया कदाचिद्विज्ञापितः।

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि कबहुं मैंने प्राणनाथ श्री गोकुल प्रभुन के आगे विनय करी कि, "हे प्राणनाथ महाप्रभो आनन्दमात्र करपाद मुखोदरादि जाके ऐसे पुरुषोत्तम श्री गोकुलाधीश प्रभुन की गुण स्वरूप लीला की चर्चा कितनेक जीवन कुं का कारण सुं नहीं रुचे है अवतारन की गुणरूप लीला की चर्चा तो रुचे है वासे औरन की तो अत्यन्त ही रुचे है तामें कारण कहा है या प्रकार मेरी विनय कुं सुनकर आज्ञा करते भये हैं कि पुरुषोत्तमोत्तम श्री गोकुलेश प्रभुन को जो प्रागट्य है सो तो कबहुं ही होय है तासुं महामुनीन कुं हुं ज्ञात नहीं है ब्रह्मादिक कि वेदादिक हुं विशेष सुं नहीं जाने है जासुं अभ्यास नहीं है तासुं वर्णन हुं नहीं कियो है और अवतारन को प्रागट्य बहुत बेर ही होय है तासुं मुनिन कुं कि वेदादिक कुं विशेष सुं जाने है जासुं अभ्यास विशेष है तासुं वर्णन हुं विशेष ही करे है जान हुं चुके है अभ्यास हुं वैसो विशेष है तासुं विनकू तो वे मुनी कि वेदादिक स्वतः ही जान जाय है तामें कारण अभ्यास है जैसे घोड़ा कुं गुड़ मिसरी नहीं रुचे है सो कड़वी कि तीखी मिरच तो नहीं है किंतु अभ्यास नहीं है और वास रुचे है सो कछू मीठो तो नहीं है किंतु रात दिन अभ्यास ही वाकुं है तासुं ही रुचे है श्री कल्याण भट्ट जी कहे हैं कि श्री गोकुलाधीश प्रभुन ने अपने स्वरूप में अरुची कुं जो कारण अभ्यास है सो या प्रकार वर्णन कियो है याकुं जो अच्छी रीति सुं विचारे है सो बुद्धिमान श्री गोकुलाधीश प्रभुन के गुण स्वरूप लीलादि में रुची कुं प्राप्त होयके विनकी कृपा सुं ब्रह्मादिकन कुं हुं दुर्लभ जाके चरण कमल है ऐसे वा श्री गोकुल बल्लभ प्रभुन कुं बिना परिश्रम के भली भाँति ही प्राप्त होय है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख श्रीमदुकि मुकामधे चतुर्दश कल्लोल पंचवीशस्तद्रु पाधरुचीबीज निरूपक स्तरंग ॥२५॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग षष्टविशाम

श्लोक -- **अन्यकुत्तः पुनर्हेतो परमः पुरुषोत्तमः सर्वत**
उत्कृष्यते इति मया विज्ञापित उवाच माँ प्राणपतिः ॥

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि गुण सागर हे महाप्रभो पुरुषोत्तम श्रीजी का कारण सुं सबन सुं उत्कृष्ट है या प्रकार मेरी विज्ञापना कुं सुनके आज्ञा करत भये हैं कि पुरुषोत्तम श्रीजी जासुं सर्वोत्कृष्ट वा वा अर्थ के भोक्ता हैं तासुं सर्वोत्कृष्ट है तब फिर मैंने पूछयो कि वे सर्वोत्कृष्ट वे वे अर्थ कौन से हैं तब आपने आज्ञा करी कि वे वे स्वामिनी जी के मुख्य श्री स्वामिनी जी है वे सर्वोत्कृष्ट है वा स्वामिनी जी में हु प्रकाशमान परकीया भाव वामें हु कबहू स्वकिया भाव प्रकाशमान है वामें हु विनय नमृता पतिवृता आदि भाव, कि मुग्ध भाव होय है तामें हु जोबन की अंकुर रस विकार कुं अंकुर कि रमणादि में वाम पनो तथा मान में मृदुता कि अत्यन्त अधिक लज्जावारो भाव होय है तथा कोइ में मध्या भाव होय है वामें हु बिचित्र सुरत कि रस विशेष कि योवन विशेष की वाणी थोरी कि प्रगल्भता चाहना कि अनुकूल लज्जावारो भाव होय है तथा कोइ में मध्या भाव होय है वामें हु कोइ में प्रगल्भा भाव होय है वामें हु रस विशेष कुं उछलनो कि जोबन विशेष कुं उछलनो कि आसक्ति सुं लज्जा की न्यूनता कि प्रिय कुं आधीन करनो यह भाव विराजे है । मध्यामे हु ऐक धीरा होय है तामें मान आक्षेप वचन वक्र वचन राजे है दूसरी धीरा धीरा होय है तामें मानरुदन होय है तीसरी अधीरा होय है तामें मान कठोर वचन विशेष होय है वैसे प्रगल्भा हु तीन प्रकार की है तामें ऐक तो धीरा है वामें मान कुं छिपावनो रमण में उदासीनता बाहिर कुं मिथ्या आदर विशेष रहे है दूसरी धीरा धीरा है वामें मान आक्षेप कि वचनादि होय है तीसरी अधीरा है वामें मान तर्जन ताड़नादि विशेष होय है तथा वा नायिकान में हु प्रेम कुं थोरो प्रकट करनो विराजमान होय है तथा परकीया हु दोय प्रकार की है एक अन्य विवाहिता है सो आपत्ति आदि के आधीन होय है अविवाहिता तो पिता आदि के आधीन होय है तामें विवाहिता परकीया के आठ प्रकार है स्वाधीन भक्त का खंडीता, अभिसारिका, कलहांतरिता

विप्रलब्धा, प्रोषित, भर्त्तका, बासकसज्जा, समकंकिता यह आठ भेद हैं याके भेद है याके भेद लक्षण सब रस शास्त्र सुं जानने तामें अपने अंगन में जो छिपती जाय "षणन कुं जाने मूक की तरह कियो होय चादर घुघंटिया जो आच्छादित ऐसे बड़े कुलकी नायिका या रीति सुं अभिसार करे है ऐसे नायिका हुं तामें रात्रि मिसारिका ज्योत्सनाभिसारिकादि अभिसारिका वर्षाभिसारिका वाल्याभिसारिका -- ऐसे भेदवारी होय है याके लक्षण हुं रस शास्त्र सुं जानने अब स्वामिनीन के अलंकार कहे है कि प्रियतम के अर्थ प्रिया में प्रथम अत्यन्त सूक्ष्म ही रसमय विकार होय है जो थोरो सो ही प्रतीत होय है जामें रमण कि इच्छा प्रगट होय ऐसो भ्रू कि नेत्रादि में कछुक विकार होय है जब सो रस विकार अत्यन्त प्रगट होय है तब तो स्वरूप की शोभा जोबन की शोभा अंगन की शोभा तथा वैसी अवस्था की सिद्धि कि रसात्मक कांति की सगरी अवस्थान में मधुरता कि निर्भयता तथा सदेव विनय धैर्य की प्रीति सुं प्रिय कुं अनुकरण यह सब प्रकार प्रगट होय है तामें विलास हुं प्रगट होय है तामें थोरे से हुं श्रृंगार में मनोहरता वांछित वस्तु में हुं सौभाग्य के मद सुं निरादरता तथा प्रिय के समागमादि सुं हर्ष सुं प्रगट भयो मंदहास्य कि सुखोरूदन कि हास्य कि भय क्रोध श्रम आदिक समूह प्रगट होवनो तथा प्रिय ने केश कुच अधरादि कुं स्पर्श कियो तामें संभ्रम सुंनन ऐसे निषेध के वचनन कुं कहनो कि शिर तथा हाथ कुं निषेध की सूचनार्थ कंपावनो प्रिय के प्रति पधारवे आदि समय में साहस कि हर्ष सुं वस्त्र भूषणादिक उलटपुलट की सौभाग्य कुं गर्व कि जोबन कुं गर्व कि सौंदर्य कुं गर्व उत्तर देयवे के अवसर में हुं लज्जा सुं चुपचाप रहनो जानी भयी वस्तु कों हुं अजाने होयके पूछनो आधौभूषण कि श्रृंगार करनो कि त्रुठे ही इत उतकुं देखनो कछुक रहस्य कुं कहनो कि मनोहर वस्तु देखवे की लेवे लिये, लालच कि जोवन के भार सुं वृथा हलनो, प्रिय के आगे कछुक कारण सुं हुं भय संभ्रम कि बिहार स्थल में प्रिय के संग रमण, यह विविध प्रकार के विलास प्रगट होय है अब मुग्धा तथा कन्यान के प्रेम चेष्टा कहे है कि देखवे पर लज्जा कुं दिखावे है प्रिय के सन्मुख नहीं देखे है, छिपे कि जाय रहे कि आगे गये प्रिय को चतुरता सुं देखे है प्रिय कुछ बारंबार पूछे है मुख कुं नीचे करके मंद-मंद गद्-गद् स्वर सुं ही कछुक प्रिय के संग बोले है प्रियतम में नवीन अनुराग वारी मुग्धा कि क़न्या

और सुं चलायी वा प्रिय के कथा कुं और ठारे नैन लगाय के सावधान होय के सुने है अब सगरी स्वामिनीन के प्रेम चेष्टा कुं कहे है चिरपर्यन्त ही प्रिय के निकट रहनो बड़ो माने है कि आछो जाने है तथा बिना सिंगार के या प्रिय के सन्मुख नहीं आवे है कबहुं वारन के विस्तार तथा बांधवे की मिससुं प्रिय कुं अपनो भुजमूल कि कुच तथा नाभि कमल हुं स्पष्ट ही दिखावे है प्रिया की जो परिचालिका है सेवा तत्पर भक्त सुंदरी है कि दुति है वाकुं वचनादि सुं आनंदित करे है या प्रिय के मित्रन पर विशेष विश्वास करे है कि बहुत मान हुं करे है अपनी समान शीला सखीन के बीच तो या प्रिय के गुणन कुं ही सुनावे है अपनो धन हुं याके अर्थ देवे है याके पोढ़वे में पोढ़े है याके दुःख में दुःखी होय है सुख में सुखी होय है प्रियतम कुं नयनों के सन्मुख ठहर के दूर सुं ही प्रिय कुं देखे है या प्रिय के सन्मुख ही अपने परिवारन कुं सामने होय के विकार सहित बोले है कि क्रोध के वचन कहे है तथा कछुक देखके वृथा हांसी कुं करे है कि कानों में खुजार करे है वेनी को छोड़े हैं तथा बाँधे है जंभा करे हैं कि हयासी करे है अंगन कुं स्फुटित करे है कि बाल कुं आलिंगन करके चुंबन करे है सखी के माथे पर तिलक लगावे है कि पांव के अंगुष्ट सुं भूमि कुं लिखे है कटाक्षन सुं देखे है अपने अधर कुं दंतन सुं दबावे है कि मुख कुं नीचे करके प्रिय कुं कहे है तथा जा स्थल में अपनो प्रिय बिराजत होय वा स्थल कुं कबउ नहीं छांड़े है कि वाके घर में कोऊ कार्य के मिस सुं ही जाय है तथा प्रिय के कछुक वस्त्रादि दिये होय तो वाकुं अपने अंग पर धर धरके बारंबार देखे है कि वाके संयोग में तो अत्यन्त शोभायमान होय है वियोग में तो अत्यन्त मलीन कृश होय जाय है तथा अपने प्रिय के स्वभाव कुं अधिक माने है कि वा प्रिय के प्रिय कुं हुं अपनो प्यारे जाने है थोरे मूल्यवारी वस्तुन कुं हुं प्रार्थना करे है प्रिय के संग पोढ़वे में हुं पीठ कर सोवे है या प्रिय के सन्मुख जब आवे है तब तो सात्वीक विकार जो स्तंभ कंपरोम हर्ष पसीना आदि है बिनकुं प्राप्त होय है प्रिय में अनुराग वारी सो प्यारी स्नेह भर्यो मधुर सुन्दर बोले है बिनमें जो नवीन विवाहिता है वाकी सगरी ही चेष्टा तो लज्जा विशेष सुं भरी ही होय है मध्या नायिका की समान लज्जावारी होय है प्रगल्भा नायिका तो प्राय लज्जा रहित ही कि थोरी लज्जावारी होय है तामें नायिका को भाव तो लेख

पत्र पठायवे सुं कि स्नेह भरे मनोहर देखवे सुं कि कोमल वचन सुं कि दुति आदि के पठायवे सुं ही प्रगट भये है । स्तंभ कि जड़ता पसीना रोम हर्ष स्वरभंग गद्‌गद कंठ कंप विवर्णता आंसू तथा मूर्छा यह आठ सात्वीक विकार है भय कि हर्ष कि रोगादि सुं चेष्ट्य को जो नाश है सो तो स्तंभ है रमण ताप श्रम सुं जो शरीर सुं जल विदुंन कुं निकरनो है सो पसीना है हर्ष कि अद्‌भुत आश्चर्य कि भय आदि सुं जो रोम हर्ष है सो रोमांच है मद हर्ष की पीड़ा आदि सुं विस्वर होवनो, गदगद कि स्वर भंग होय है प्रेम दोष कि श्रम आदि सुं अंगन में जो कंप है सो कंप है चिंता हर्ष क्रोधादि सुं जो रूपक बदलनो है सो विवणता है क्रोध दुःख कि हर्ष सुं नेत्र सुं जल चले है सो (अश्रु है) आंसु, सुख कि दुःख कि चेष्ट्य कि ज्ञान कुं जो निवर्त होवनो है सो (प्रलय) मूर्छा है अव्यभिचारी भावन कुं वर्णन करे है तत्वज्ञान सुं कि अपवाद सुं कि इर्ष्या आदि सुं अपनो अपमान करनो है सो निर्वेदु है तामें दीनता चिंता अश्रुपात श्वास विवर्णता कि उच्छासादि कि भीतर श्वासन कुं बंध कर लेनो, इत्यादि विकार होय है तथा अत्यन्त जो वेग है सो संभ्रम होय है तामें संभ्रम वर्षा सुं भयो होय तो अंगन में शिथिलता होय है अग्नि सुं भयो होय तो घूमोदि सुं व्याकुलता होय है राज उपद्रव से भयो होय तो शस्त्र हाथी घोड़ा की तैयारी करे है यदि हाथी आदि सुं संभ्रम भयो होय तो वामें स्तंभ कंपादि होय है यदि पवन सुं भयो होय तो वामें अश्रु आदि सुं व्याकुलता होय है, इष्ट के समागम आदि सुं भयो होय तो वामें हर्ष होय है तथा अनिष्ट सुं भयो होय तो वामें शोक होय है, वैसे और हुं यथा योग्य जान लेनो दुर्गति आदि सुं निस्तेज होय जानो सो दीनता होय है, तामें मलिनतादि होय है, रमणमार्ग गमनादि सुं जो खेद होय है वामें मोह कि आनंद होय है यासुं उत्तम पुरुष तो शयन करे है । मध्य तो हंसे है कि गान करे है अधम पुरुष तो कठोर वचन कहे है रोवे है इष्ट के अनिष्ट के दर्शन सुं कि श्रवण सुं जो ज्ञान को अभाव होवनो है सो जड़ता होय है तामें टकटकी लगाय के देखनो कि मौन होयके रहनो इत्यादि प्रकार होय हैं । शूरता कि अपराधादि सुं जो क्रोध होय वाकुं उग्रता कहे हैं, तामें पसीना, सिरपंक, तर्ज्जन, ताड़न आदि होय है भय दुःख आवेग तथा अर्थ चिंतनादि सुं चित्त कुं निकस जानो याकुं मोह कहे है तामें मूर्च्छा कि अंगन कुं गिरनो कि भ्रमण अदर्शनादि होय

है । निद्रा कुं निवर्त करवे वारे कारण सुं चेतन होवनो कि जाग परनो वाकुं विबोधक कहे हैं वामें जंभा तथा अंग भंग नयन मिलन अंगन कुं देखनो आदि होय है (बगासा) निद्रा में जो रमण को अनुभव है सो स्वप्न होय है वामें क्रोध आवेग भय ग्लानी सुख दुःख आदि कुं करे है । ग्रह आदि के आवेश सुं जो मन कुं विक्षेप है सो अपस्मार होय है, वामें भूमी पर गिरनो, कंप पसीना, मुख सुं फेन आदि होय है लक्ष्मी विद्या तथा आछी कुलादि सुं भयो जो मद विशेष है सो गर्व होय है, वामें अवज्ञा तथा विलाश पूर्वक अपने अंगन कुं देखनो तथा अभिमान यह होय है अस्त्रादि सुं अपने जीवन कुं त्याग करनो मरण होय है वामें शरीर कुं गिरनो आदि होय है श्रम तथा गर्भ गरमी उत्पन्न होय है सो आलस्य कहावे है वामें जंभा तथा बैठे ही रहनो आदि होय है निंदा तथा आक्षेप अपमानादि कुं सहन न करनो वाकुं अभिनिवेश कहे है तामें नेत्र लाल शिरः कंप भ्रू-भंग तर्जनादि होय है मार्ग श्रम परिश्रम कि मद आदि सुं चित्त कुं चेतना कुं जो अस्त होवनो है सो निद्रा होय है वामें जंभा नयन मूदनो उछास अंग भंगादि होय है भय कि गौरव कि लज्जादि सुं अपने हर्षादि के आकार कुं जो छिपावनो है सो अवहित्या तामें अन्य व्यापार में आशक्ति तथा अन्य भाव अन्य भाषण अन्य कुं देखनो आदि करे हैं प्रिय के वियोग में काल कुं न सहन करनो सो उत्सुकता है वामें चिरकाल पर्यन्त ताप त्वरा कि स्वेद दीर्घ निश्वासादि होय है काम शोक भय आदि सुं जो चित्त में भ्रम है सो उन्माद होय है वामें अयोग्य हंसनो रुदन गति प्रलापादि होय है तथा और को क्रूरता सुं कि अपने दोषादि सुं अनर्थ कुं जो विचार तो है सो शंका होय है वामें विवर्णता गद्गद् स्वरादि पाश्व को देखनो कि मुख कुं सूखनो होय है तथा सद्रश ज्ञान चिंतादि सुं भ्रू कू उंचो करनो आदि होय है प्रथम अनुभव किये अर्थ कुं स्मरण करनो स्मृति होय है वामें नीति मार्ग के अनुसरणादि सुं जो अर्थ कुं निर्द्धार करनो है सो मति है वामें हर्ष धैर्य संतोष बहुत मान होय है वात पित्त कफादि सुं जो ज्वरादि सो व्याधि होय है तामें भूमि पर गिरनो तथा कंपादि होय है निर्धात विद्युतपात कि उलकापातादि सुं जो भय है वाकुं त्रास कहे हैं वामें कंपादि होय दुराचार सुं घृष्टता कुं जो अभाव है सो लज्जा होय है वामें मुख कुं नीचे करनो आदि होय है प्रिय की प्राप्ति सुं हर्ष होय है वामें मन की प्रसन्नता अश्रु गद्गद् आदि होय है अन्य के

गुण वृद्धि आदि कुं जो उद्धतता सुं सहन न करनो है सो असूया है वामें वाके दोष कुं प्रगट करनो भ्रू विलास तथा अवज्ञा क्रोध चेष्ट्या आदि होय है उपाय के अभाव सुं सत्व कुं कि उत्साह कुं जो नाश है सो विषाद होय है वामें श्वास उर्द्धश्वास ताप सहायादि कुं ढूँढनों होय है ज्ञान तथा वांछित प्रिय के आगमादि सुं जो संपूर्ण कामता है सो धैर्य होय है वामें सुंदर वचन कुं प्रकाश हास्य सुन्दर बुद्धि होय है तथा मत्सरता राग द्विशादि सुं जो चित्त की चंचलता है सो चपलता है वामें ताड़न तर्जनो कठोर वचन इच्छा चरण होय है रति-मनको ताप तथा क्षुधा तृषादि सुं ग्लानि होय है वामें प्राणहानि कंप क्रशता उत्साह नाश आदि होय है प्रिय के वियोग में चिंता है सो ध्यान है वामें चित्तशून्य होय है कि श्वास कि ताप होय है संदेह सुं विचार करनो तक कहयो जाय है वामें भ्रू शिर तथा अंगुलीन कुं नचावनो चंचल करनो तथा वचनादि विकार सुं चित्त की प्रफुल्लता हास होय है या प्रकार श्री गोकुलाधीश प्रभुन ने अन्य व्याज सुं अपनो रसात्मक स्वरूप कुं वर्णन कियो है वाकुं जो भक्त पढ़े है कि चिंतन करे है कि सुने है सो भक्त वेग ही वा प्रभुन की प्रेम लक्षणा भक्ति कुं प्राप्त होय है तथा वेग ही प्रभुन के धाम कुं प्राप्त होय है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख श्रीमदुकि मुकामधे चतुर्दश कल्लोल षष्टविशम निरूपक स्तरंग ॥२६॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग सप्तवींश

श्लोक -- **तथा परिस्मिन समये गोकुल प्राणनायकम ।**
जिस यं प्रणम्याहं करुणांमोधिसागरं ॥

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि कबहु और समय में करुणासागर श्री गोकुल के प्राणनाथ प्रभुन के आगे प्रणाम करके मैंने विज्ञापना करी कि हे गुणसागर महाप्रभो महाराजाधिराज पुरुषोत्तम मुगटमणी, प्रभो, कलियुग में भयो मो सदृश महापापी यह दुष्ट जीव कब कृतार्थ होय

यह मेरे ऊपर कृपा करके आज्ञा करिये तब महाप्रभु आज्ञा करते भये है कि जब वैसो हुं जीव शुद्ध पुष्टी मार्ग के योग्य सर्वोत्तम भगवदीय होय तब कृतार्थ होय है तब मैंने विज्ञापना करी कि कब वैसे होय है तब महाप्रभु जी आज्ञा करी कि जब श्री पुरुषोत्तम वाकुं वा पुष्टीमार्गीय भाव सुं वरे है तब ही वैसो होय है ।। फिर मैंने विनय करी कि कब पुरुषोत्तम वाकुं वैसे वरे है । तब श्री महाप्रभु जी आज्ञा करी कि जब श्री मुख्य स्वामिनी जी की सखीन की, कि दासीन की, कि कोउ दास के उपर श्रीमत चरण कमलो की रज अथवा द्रष्टी परे है तब वाकुं वैसे वरे हैं, तब मैंने विनय करी कि कब वाके उपर विनकी श्री चरणरज की कृपाद्रष्टि परे है । तब महाप्रभु जी आज्ञा करी कि जब मुख्य स्वामिनी की सहेली अपने अपने घर में महोत्सव करे है तामें नाचे है कि गान करे है महाप्रसाद लेवे है लिवावे है तब विश्राम करे है तब वावा महोत्सव मंदिर में वा सखीन की सगरी दासीजन मार्जन करे है कि महोत्सवल मंदिर में गुलाब केबड़ा खसखस के जलन सुं सिंचन करे है कि वहाँ-वहाँ गिरे सुगन्धी चंदन चूर्ण पुष्पादि को उठाय के बाहिर डारवे पधारे है तब विनकी सो चरणरज, कि कृपाद्रष्टि, वा दास के ऊपर परे है, तब मैंने विनय करी, कि श्री मुख्य स्वामिनी जी की वे सखी सहेली कब महोत्सव करे है, तब श्री महाप्रभुजी आज्ञा करी, कि जब श्री मुख्य स्वामिनी जी अपने कुं सर्व प्रकार सुं ही कृतार्थ माने है तब वे महोत्सव करे है । तब मैंने विनय करी कि, कब स्वामिनी जी अपने कुं वैसे कृतार्थ माने हैं, तब आपने आज्ञा करी कि जब प्राणनाथ श्री पुरुषोत्तम ही अपने कुं कृतार्थ माने हैं । तब मैंने विनय करी कि वे आपने आज्ञा करी कि वा पुरुषोत्तम कुं हृदय है सो अद्भुत अलौकिक क्षेत्र है तामें जब श्री मुख्य स्वामिनी जी के कटाक्ष रूप हल बारंबार कर्षण करे है तामें स्वामिनी जी कुं कुच कलश युगल है वे तो वा क्षेत्र के समान करवे वारी भारी ऐक समीकरण नाम दारु है वासुं जब श्रीजी हृदय विषमता कुं छांड़ समान होय जाय है तामें श्री स्वामिनी जी के मंदहास्य अमृत सुं बारंबार सिंचन होय है फिर वामें वा मुख्य स्वामिनी जी के सखीरूप जे कर्ष कहे है कि खेती करवे में चतुर है वे स्वामिनी जी कुं प्रिय के मिलाप अर्थ हविशेष वारे वचनरूप बीज बोवे है वाके पीछे

वा प्रिय के हृदय रूप क्षेत्र में आशा रूप कोऊ अनिर्वचनीय उदय होय है जामें सखीन ने सुनायो जो श्री मुख्य स्वामिनी जी के पधारवे कुं निश्चय है सो अंकुर रूप है तथा प्रिय के निकट पधारवे में जो उपयोगी वस्त्र श्रृंगार श्री स्वामिनीजी ने किये है या वार्ता कुं जो सुननो है सो प्रथम दोय पत्ती है वैसे वा मुख्य स्वामिनी जी के पधारवे के वृत्तांत कुं जो चुंबन आलिंगन तथा दंतक्षत नखक्षत अधर खंडनादि है वे तो स्वाद फल है तब जे परस्पर प्रेम हास्य विनोद अधरपान सुरत विपरीत रमणादि होय है वे ता वा फलन कुं मधुररस है तब वा मुख्य स्वामिनी जी की छाया में विश्राम करत प्राणनाथ श्रीजी अपने कुं अत्यन्त कृतार्थ माने है सो सर्व प्रकार सुं परिपूर्ण परम पुरुषोत्तम आनन्द मात्र करपाद मुखोदरादि रूप रसिक शिरोमणी व किशोर सुंदरवर श्रीमद गोकुलाधीश श्रीमद गोकुल के माणिक प्रभुन कुं अपार अगाध निस्तुष श्रृंगार रस के परम सार कुं महासागर रूप यह स्वरूप है या प्रकार सुं परम भगवदीय कहे है यह प्रभु श्री गोकुल वल्लभ या महाश्रृंगार रस सागर स्वरूप सुं जा जीव कुं वरे है सोई जीव ही वैसो भगवदीय होय है कि यह रसलीला योग्य देह इंद्रीय अंतःकरण सर्वोत्तम भावादि कुं पाय के वा श्रीजी की लीला में प्रवेश कुं प्राप्त होय है या महाप्रभुन कुं एक और हुं वैसो स्नेहात्मक स्वरूप है वा स्वरूप सुं जाकुं यह प्रभु वरे है सो जीव शुद्ध पुष्टि मार्गीय शुद्ध स्नेही होय के स्नेह लीला के योग्य देहादि कुं पायके वा महाप्रभुन की स्नेह योग्य लीलान में प्रवेश कुं प्राप्त होय है वैसे या पुरुषोत्तम कुं और हुं एक ऐश्वर्यात्मिक स्वरूप है वा स्वरूप सुं जाकुं वरे है सो जीव शुद्ध पुष्टिमार्गीय सर्वोत्तम भगवदीय दास होयके दास योग्य देहादि कुं पायके प्रभुन के सेवा रूप सुख समुद्र में प्रवेश कुं प्राप्त होय है यद्यपि यह तीनों हुं स्वरूप एक ही है तथापि ऐश्वर्यात्मिक जो रूप है सो स्नेहात्मक स्वरूप कुं आवरण है स्नेहात्मक स्वरूप है सो वेसे रसात्मक स्वरूप कुं आवरण है रसात्मक स्वरूप है अन्य सब रूपन सुं विशेष है जासुं रस है सो सवन सुं विशेष है वैसे रसिक हुं सगरे भक्त .... हैं। वैसे रसलीला में जो प्रवेश है सो हुं अन्य सब लीलान में प्रवेश सर्व प्रकार सुं विशेष है श्रृंगार-रसमूर्ति श्रीमद गोकुलाधीश प्रभुन ने अनन्त दूषण के निधान रूप हुं जीव के

कृतार्थता में जो उपाय कहयो है वाकुं स्मरण करत तथा कहत कि श्रवण करत जो जन है सो वेग ही कृतार्थ होय है यामें संशय नहीं है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख श्रीमदुक्ति मुक्तामधे चतुर्दश कल्लोल दुष्ट जीव कृतार्थ-तो-पायनिरूपक सप्तवींश निरूपक स्तरंग ॥२७॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग अष्टविशोयम

श्लोक -- **अथान्यस्मिन्नवसरे भगवान्दीन-बांधवः मया**
विज्ञापितो नत्वा जीवस्य भगवान वद ॥

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि कबहु और समय में हौं प्रभु दीन बंधु श्रीजी के आगे प्रणाम करके विज्ञापना करत भयो हुं के, हे कृपासिंधो पुष्टजीव कुं कि प्रभुन कुं तारतम्य कितनो है सो स्पष्ट कहीये, यह सुनके मंदहास्य सुं प्रफुल्लित श्रीमुखारबिंद सुं यह प्रभु आज्ञा करत भये हैं, कि रजपर्वत को जैसे तारतम्य है वैसो ही जीव तथा प्रभु को है । तब मैंने कह्यो कि महाराजाधिराज श्री आपने जो आज्ञा करी है सो ऐसे ही है कि जीव है सो रज समान है, पुरुषोत्तम है सो पर्वत समान है । तब श्री महाप्रभु जी मंद-मंद हंसत ही बिराजमान भये, तब मैंने दीनता पूर्वक विज्ञापना करी कि महाप्रभो प्राणनाथ मैंने कहा यह अयोग्य कहयो है, जो भगवान श्री आप सुन्दर मंदहास्य सुं शोभायमान सुन्दर अधर पल्लव कुं दरसावत ही बिराजमान है, मैंने तो अत्यन्त योग्य कहयो है, कि जो रज जीव है पर्वत ईश्वर है यदि यह अयोग्य होय तो करुणासागर महाराजाधिराज श्री आप ही मोकुं कृपा सुं जताये । यह सुनके प्रभुन ने आज्ञा करी यामें दोय द्रष्टी है एक लौकिक और दूसरी अलौकिक, वैसे वार्ता हुं दोय प्रकार की है एक लौकिक द्रष्टि के अनुसार है दूसरी अलौकिक द्रष्टि के अनुसार है विनमें कोन सी द्रष्टि के अनुसार वर्णन करूँ, लौकिक द्रष्टि के अनुसार जो वार्ता है वासुं अलौकिक द्रष्टि के अनुसारवारी वार्ता कुं बहुत ही तारतम्य है तब मैंने विज्ञापना करी कि कृपासागर महाप्रभो हो तो दोनों वार्त्ता में एक हुं नहीं जानु हुं यदि महाराज ही यामें कृपा सुं मोकुं जताये हों तो दोनों को ही जानुंगो तासुं हे गुणसागर

प्रभो मुज अपने दास पर राज प्रसन्न होय तब प्रसन्न होवत ही श्री गोकुल प्रिय प्रभु मंदहास्य पूर्वक मेरे प्रति आज्ञा करत भये है कि जो हमने प्रथम कही है कि जैसे रज है वैसे जीव है जैसे पर्वत है वैसे भगवान है सो यह तो लौकिक द्रष्टि अनुसार है तथा जो अलौकिक द्रष्टि के अनुसार वार्ता है सो तो अन्य ही है वाके कहवे में तो हौं हुं स्वयं डरपू हुं तब श्री कल्याण भट्ट जी कहे हैं कि मैंने विनय करी कि श्री गोकुल के प्राणनाथ पूर्ण पुरुषोत्तम श्री आपकुं हुं डर कासुं है हे कृपा सिंधो हे महाप्रभो यह मोकुं आप कृपा कर कहिये तब प्राणनाथ श्रीजी आज्ञा करी, गुणसागर भगवद भक्त में हुं प्रायः जीव भाग रहे ही हैं जामें जीव भाग होय, वामें लौकिक द्रष्टि अवश्य होय है जामें लौकिक द्रष्टि होय सो यदि अलौकिक द्रष्टि अनुसार वचन कुं सुने तो वचन कुं मिथ्या माने है वा वचन में वाकुं थोरो सो हुं विश्वास नहीं होय है तथा अविश्वासी पुरुष के सामने कही जो अलौकिक वार्ता है सो वक्ता के स्वार्थ कुं नाश, लौकिक वार्ता जैसे न करे यह नहीं है किंतु वाके स्वार्थ कुं अवश्य ही नाश करे यासुं हौं अत्यन्त डरपु हुं कि जामें अणुमात्र हुं जीव भाग होय सो या अलौकिक द्रष्टि के अनुसार वचन कुं कबहू नहीं सुने या अलौकिक वार्ता में अधिकारी तो शुद्ध सर्वोत्तम भक्त है सो वैसो भक्त तो भूतल में सर्व प्रकार सुं दुर्लभ है तथा अलौकिक वार्ता कोउ के आगे कबउ प्रकाश नहीं करनी यह मेरो मत है यामें संशय नहीं है तामें यदि अलौकिक वार्ता प्रभुन की इच्छा सुं कि अपनी इच्छा सुं कबऊ कोऊ प्रगट होय तो वामें जीव कुं दोष नहीं जाननो, यदि अपनी इच्छा सुं ही श्रेष्ठ वक्ता, कि कनिष्ट वक्ता, कबहु हुं प्रगट करे तो तब वार्ता अवस्य ही क्रोध करे है जब वार्ता क्रोध करे है जब वक्ता को कार्य अवश्य नाश होय है जासुं अलौकिक वार्ता है सो साधारण नहीं है क़िंतु सो हुं ऐक प्रभुन कुं उछलित रसात्मक ही स्वरूप है सो या वार्ता के कुपित होयवे में वक्ता को सर्व कार्य नाश नहीं होयगो का किंतु सर्वथा होयगो ही यामें मेरो निश्चय है शुकदेव जी तो चलके राजा परीक्षित कुं अलौकिक कथा नहीं सुनायी किंतु सो कथा ही वहां जायके कृपासागर प्रभुन की अपनो इच्छा सुं ही प्रगट भयी है यह विशेष तो आगे वर्णन किये लक्षण सुं ही जाननो, वाकुं दिखावे है कि जहाँ कोऊ जन वैसी अलौकिक वार्ता कुं करे है वहाँ अवश्य ही दुःखदायक रस भंग होय है तथा

श्रोता के मन में सर्व प्रकार सुं अविश्वास हुं होय है, अनादर हुं होय है, या वार्ता में अरुची हुं होय जाय है, वैसे वामें वा वा प्रकार के पूर्वपक्ष हुं बहुत उदय होय है, कि पश्चाताप हुं विशेष होय है, हा हा हों पापी ने इनके आगे अलौकिक भगवद वार्ता काहे कुं प्रगट करी यह मैंने अत्यन्त ही बुरो कियो है और जहाँ तो अलौकिक वार्ता प्रभुन की इच्छा सुं स्वतः प्रगट होय है वहाँ श्रोता कि वक्ता के मन में सर्व प्रकार सुं अत्यन्त ही रस उछलित होय है कि परम प्रीति उत्पन्न होय है प्रसन्नता तथा मोद हुं होय है विश्वास हुं द्रढ होय है प्रभुन में मनोहर भक्ति हुं होय है आपस में दान मान प्रणाम तथा अनेक प्रकार के उपकार हुं बारंबार होय है तथा वामें सगरो संशय हुं नाश होय है या प्रकार के लक्षणन सुं बुद्धिमान निश्चय करके यह अलौकिक वार्ता अपनी इच्छा सुं ही प्रगटी है कि प्रभुन की इच्छा सुं ही प्रगटी है या हेतु सुं वामें आधो वक्ता हुं श्रोता होय कि न होय तो हुं रसभंग नहीं होय है तथा निकृष्ट श्रोता वक्ता हुं परन्तु रस विशेष ही होय है श्रीजी आज्ञा करे है कि भट्ट जी हो तो अबहुं अपनी इच्छा सुं ही प्रगट होय है यामें बहुत विशेष कहवे सुं कहा है ऐसे ही विचार लेनो जैसे कृपा विशेष सुं ही भक्तन में ही श्री गोकुलाधीश प्रभु प्रगटे हैं, वैसे यह वार्ता हुं कृपा विशेष सुं भक्तन में ही प्रगट होय है यासुं जैसे श्री गोकुलाधीश प्रभु है वैसे ही यह वार्ता है या प्रकार सुं श्री गोकुलाधीश प्रभुन के श्री मुखरूप क्षीर सागर सुं प्रगटे वचनरूप अमृत कुं कानरूप अंजुलीन सुं पान करके मैंने विज्ञापना करी कि हे भगवान हे गोकुलेश महाप्रभो आप तो पूर्ण पुरुषोत्तम है श्री आपकी इच्छा सुं अलौकिक वार्त्ता रूप परम अमृत प्रगट होय तो वाकुं आपसुं पान करके हौं कृतार्थ होय जावुंगो श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि या प्रकार के मेरे वचन सुनके मंदहास्य सुं शोभायमान श्री मुख कमल वारे सो महाप्रभो कृपासिंधो शरणागत रक्षक भगवान मोकुं आज्ञा करते भये हैं कि जैसे रज है वैसे तो ईश्वरेश्वर प्रभु है जैसे पर्वत है वैसे सो जीव है जब मैंने विनय करी कि हे ईश्वरेश्वर प्रभो यह कैसे बने है सो राज के चरणकमल संबंधी रज में प्राणन कूं वारुं हुं मेरे ऊपर कृपा करके स्पष्ट करिये तब भगवान श्री गोकुलाधीश प्रभु अक्षर अक्षर में अमृत के समुद्रन कुं वर्षा कर रही रसना सुं मेरे ऊपर कृपा करत यह कहते भये हैं सो पर्वत योनी कि महिमा बडाइपनो तथा रज पने की

महिमा लघुता, यह अनेक प्रकार की है वामें गुणन सुं जो महिमा कही है वो तो श्रेष्ठ है तामें परम पुरुषोत्तम श्री गोकुलाधीश प्रभुन में श्रृंगार रसरूप भक्ति करवे सुं कि वैसे स्नेह सुं कि आसक्ति व्यसन कि विश्वास कि आदर सुं हुं कि सर्वात्म भाव सुं कि वैसे परम सेवन सुं कि और हुं अनेक प्रकार के उद्यमन सुं स्नेह कुं जो करनो है सो परम गुण है यासुं अन्यगुण श्रेष्ठ नहीं है परन्तु यह सगरो गुण तो सर्व प्रकार सुं जीव में ही प्रतीत होय है वैसे पुरुषोत्तम में तो यह एक हुं गुण नहीं है दूसरी यह बात है कि यह जो जीव है सो तुच्छ है दोष सागर है महापापी है कि अधम है तथा कृत्घन कि बहिर्मुख है नीच है अकृतज्ञ है दुर्बुद्धि है वामें हुं प्रेम कि आशक्ति कि आदरादि हुं होय यह तो दूषण है परन्तु यह सगरे ही वामें प्रतीत होय है या प्रकार बहुत भाँति सुं विचार के कहे है कि रज समान सो भगवान है तथा पर्वत समान श्री गोकुल प्राणपति के भक्त है अहो श्री गोकुल के जो प्रभु हैं सबन सुं सर्व प्रकार सुं ही उत्तम है सगरे कि सुशीलता रूप मणिन के सुमेरू है या प्रभु के समान और कोऊ नहीं है, तो अधिक कहाँ सुं होय, सगरे प्रकारन सुं हुं सबन सुं ही यह प्रभु अधिक है ऐसो हुं महाप्रभु वैसे जीव की तुच्छता कुं कि दूषणन कुं ही नहीं माने है वाके केवल भक्ति गुण कुं ही देखे है तासुं वा जीव कुं वा भक्ति स्नेह कुं वाकुं अपने सुं महाविशेष माने है तासुं पर्वत समान ही है अरु अपने कू रज समान ही प्रभु जाने है जासुं प्रभु तो अलौकिक द्रष्टि वारे हैं तासुं मैंने जो यह वचन कहयो है यह हुं अलौकिक है यामें प्रमाण तो या प्रभुन को अद्‌भुत अनुभव ही है या प्रकार के अर्थ में और प्रमाण नहीं विचारनो जासु प्रभुन कुं साक्षात अनुभव रूप प्रमाण जब हाथ में आवे कि प्रत्यक्ष होय तब को बुद्धिमान दुर्बल वेदशास्त्रादि रूप अन्य शून्य प्रमाण कुं ढूँढ़े है या कारण सुं ही भगवान हुं **निरपेक्ष मुनि शान्त निर्वैर्यं समदर्शिनं अनुव्रजाम्यहं नित्य पूयेऽधरेणुभिः** जो भक्त निरपेक्ष है प्रभु के बिना और कोऊ की अपेक्षा नहीं राखे है कि मननशील है तथा शांत निर्वैर्य कि समदर्शी है ऐसे भक्त के तो हों सदैव पीछे ही चलु हुं जासुं याके चरणन की रज सुं हों पवित्र होवूँ हु ऐसे कहे है तथा सर्व तो अधिक हुं यह प्रभु जीव सुं अपने कुं जो परमाणु सुं हुं अणु कि अत्यन्त लघु माने है तथा वा गुणन सुं वा जीव कुं पर्वतरूप महान जाने है अपने कुं वैसे लघु कहे है वैसे

वाकुं महान कहे है तथा अपने कुं वाके जीव के आधीन करे हैं अपनो अधिपति बनाय देवे है यह सगरो भक्तन कुं आनंदित करवे वारो याकुं बड़ो गुण है तथा अलौकिक द्रष्टि सुं उदय भये मेरे प्रथम कहे वचन कुं फल हुं वैसो है कि या प्रकार के गुणवारे होयवे सुं वा प्रभुन कुं अनुभव ही होय है अनुभव सुं प्रगट भये प्रेम सुं पूर्ण जो जन है वा प्रभु कुं पायके कृतार्थ होय जाय है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख चतुर्दश कल्लोल अष्टविशोयम लौकिक वड़िम निरूपक स्तरंग ॥२८॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग ऐकोनत्रीस

श्लोक -- **अथान्यस्मिन्समये विज्ञाप्यतेश्वरः ।**

भावुकाय महाराज भगवद प्राप्ति रंजसा ॥

अर्थ -- श्री कल्याण भट्ट जी कहे है कि क़बहु और समय में मैंने महाप्रभु जी के आगे विज्ञापना करी, हे महाराज, हे कृपासागर, हे प्रभो भगवदीय को भगवद प्राप्ति वेग कैसे होय, यह मेरे ऊपर कृपा करके कहिये, यह सुनके सो श्री गोकुलाधीश प्रभु प्रिय श्रीजी आज्ञा करत भये हैं, कि भगवदीयन के संगसुं भगवद प्राप्ति होय है तब मैंने फिर विज्ञापना करी, कि महाप्रभो कैसे भगवदीयन के संग सेवन सुं वेग भगवद प्राप्ति होय है सो आप आज्ञा करिये । तब कृपा सिंधु श्रीजी आज्ञा करी कि निर्दोष उत्तम भगवदीयन के संग सुं तथा सेवन सुं बिना यत्न के वेग ही भगवद प्राप्ति होय है, तामें साधारण भगवदीय यदि वैसे साधारण कुं संगत तथा सेवा कुं करे तो वा साधारण भक्तन कुं दोष तथा न्यूनता वाकुं प्राप्त होय जाय है, भगवान की प्राप्ति में हुं विलंब होय जाय है, और जो तो, स्वयं उत्तम निर्दोष भगवदीय है सो यदि अपने सुं हीनता दोष वारे भगवदीय को संग कि सेवा करे तब वाके दोष तथा हीनता हुं या उत्तम कुं नहीं प्राप्त होय है किंतु वामें जो प्रभुन कुं प्रेम कि अनुग्रह है सो जो निर्दोष उत्तम वैष्णव कुं हुं दुर्लभ है सो हुं यामें प्राप्त होय जाय है, जाके प्राप्त होयवे में प्रभुन की प्राप्ति वेग ही होय

है। प्राणनाथ जी के मुखारविंद सुं उदय भये या वचन रस कुं हों पान करके फेर पूछतो भयो हुं कि हे प्रभो वा हीन के संग सेवा करवे वारे को भगवद प्राप्ति कैसे होय तथा निर्दोष उत्तम भगवदीय कुं हुं जो प्रभुन कुं प्रेम तथा अनुग्रह दुर्लभ है सो वा हीन कुं कैसे प्राप्त होय है यह मेरे वचन कुं सुनकर श्री महाप्रभु जी आज्ञा करत भये हैं, कि जैसे मैया को प्रेम तथा अनुग्रह जो उत्तम निर्दोष पुत्र कुं हुं दुर्लभ होय है सो दोषवारे हीन पुत्र पर विशेष ही होय है, वैसे निर्दोष उत्तम भगवदीय में हुं जो प्रभुन को निरंतर ही रहे है तथा निर्दोष कि उत्तम भक्त यदि कछुक अपराध करे तो प्रभु क्रोध ही करे है, हीन कि दोषवारो भक्त बहुत ही अपराध करे तो हुं क्रोध नहीं करे है, जैसे हीन पुत्र के संगी में हुं वैसे अत्यन्त वा पर क्रोध कछु नहीं करे है जैसे मैया उत्तम निर्दोष पुत्र के संगी में हुं वैसे अत्यंत चित्त नहीं करे है वैसे प्रभु हुं उत्तम निर्दोष भक्त के संग में वैसे चित्त कुं नहीं करे है तथा दोषवारे हीन भक्त के संगी में तो चित्त कुं अत्यन्त ही करे है जैसे मैया सदोष हीन पुत्र की सदोषता कि हीनता कुं विचार के वामें वा वा कृपा प्रेम कुं अत्यन्त करे है वैसे प्रभु हुं दोष वारे हीन भक्त के दोष तथा हीनता कुं विचार के वामें अपने स्वभाव सुं ही प्रेम कृपा कुं करे है जैसे हीन तथा दोषवारो हुं पुत्र माता सुं कि वैसे वा वा अन्य सुं हुं जैसे महिमा कुं कि निर्दोषता कुं कि वा वा गुणन कुं हुं प्राप्त होय है वैसे हीन भक्त हुं प्रभून सुं वा वा गुणन कुं कि महिमा तथा निर्दोषता कुं हुं प्राप्त होय है तासुं 'दोषवारे हीन भक्त में प्रभुन कि प्रीति की कृपा कुं विचार के वामें विचारवारो भक्त कबहु उन द्रोह कि अनादर कुं करे प्रत्युत वाके संग कि सेवा कुं करे तासुं प्रभुन की कृपा सुं कि प्रेम सुं गुणन सुं सो हुं पूर्ण होय जाय है कि उत्तम हुं होय जाय है प्रभु है स्वयं तो निर्दोष है परम स्वतंत्र है गुण तथा महिमा की अपेक्षा नहीं राखे है अधम उद्धारण होयवे सुं वाके दोषन कुं देखके निवर्त नहीं होय है स्वयं बड़े है तासुं या भक्त की हीनता कुं देखके नहीं निवर्त होय है जासुं कृपा के सिंधु है तासुं ईश्वरेश्वर प्रभु वा भक्त कुं कृपा सुं आछी भाँति सुं ही अंगीकार करे है जाकूं प्रभु अंगीकार करे है वाकी सगरी संपदा सिद्ध नहीं होय जाय है का, किंतु वेग ही सब सिद्ध होय जाय है, यासुं प्रभुनने जिनकुं अलौकिक द्रष्टिदान करी है वे भक्त निःसंदेह होय के वैसे दोषवारे हीन भक्तन

कुं हुं सर्व प्रकार सुं सेवा करे है कि सब प्रकार सुं विनके संग संगति कुं करे है तब पुरुषोत्तम हुं बिनके संग, कि सेवा करवे वारेन कुं हुं सब सिद्धि कुं दान करे है तथा अपने चरण कमल हुं दान करे है तथा प्राणनाथ श्रीजी यह विचार के कि या जो मेरे सदोष हीन भक्तन कुं हुं निष्कपट होयके सेवा संग कियो है यासुं वेग ही दीनबांधव सर्व मंगल प्रभु विनकुं अपनो स्वरूप हुं दान करे है दोषवारेन कुं संग उत्तमजन कुं जो संग है जैसे श्रेष्ठ चंदनवृक्ष कुं जैसे नागन कुं जो संग है श्रेष्ठ चंदन वृक्ष कुं वाधा नहीं करे है उत्कृष्ट के संग जो संगति है सो दोष वारे को हुं फले है जैसे चंदन वृक्ष सुं जो संगति है सो नागन कुं हुं शीतलता देवे है दोषवारे के संग सुं निर्बल होय जाय है जैसे विलाइ के संग सुं मूसा नष्ट होय जाय है दोष वारेन से संगत उत्तम जन में हुं उपकार होय है जैसे भस्म के संग सुं दर्पण हुं निर्मल होय है यह श्री गोकुलाधीश प्रभुन ने जो आज्ञा करी है याकुं बारंबार विचार करत ही वा प्रभु के सगरे भक्तन में संग सेवा कुं पायके आदर सुं करके वा प्रभु की कृपा सुं वेग ही वाकुं प्राप्त होय जाय है ॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश लीलाया सुधासिंधौ श्रीमुख श्रीमदुक्ति मुकामधे चतुर्दश कल्लोल प्रदोष भचक्कोत्कर्ष ऐकोनत्रीस निरूपक स्तरंग ॥२९॥ सम्पूर्ण ॥

श्री श्री गोकुलेशो जयति

तरंग त्रीस

श्लोक -- **श्रीमुख वचोमध्ये चतुर्दशकल्लोले प्रथमे चारौ तरंगे विन्दुरूपम।**

अर्थ -- भक्त के लक्षण कहे है चौथे तरंग में वैसे भक्तन कुं स्वभाव कहयो है पांचवे तरंग में श्रेष्ठ भक्तन कुं तारतम्य वर्णन कियो है छठे तरंग में भक्तन के दोष को प्रकार कहयो है सात में तरंग में तो प्रभु तथा भक्तन कुं परस्पर प्रेम कुं बढे है याकुं प्रकार कहयो है आठवे तरंग में तो लीलातीत (कृशरा) खीचड़ी कुं वर्णन कियो है नवमें तरंग में चार प्रकार के जीव वर्णन किये है दशमें तरंग में भाव सुं प्रकाशमान छे प्रकार के मार्ग कहे है एकादशम तरंग में पुष्टिमार्ग में फल निरवधि है यह कहयो है द्वादशमे तरंग में अलौकिक पनो मनोहर पना कहयो है तेरहवे तरंग में तो चित्त के भेद मनोहर कहे

है, चौदहवे तरंग में प्रगट पुरुषोत्तम के ही शरण जानो यह कहयो है पन्द्रहवे तरंग में तो पुरुषोत्तम की प्राप्ति में मनोहर क्रम कहे है सोलहवे तरंग में तो निष्कपट होयके भक्त कुं अनुसरण करनो कह्यो है सत्रहवे तरंग में तो हित करवे वारी सावधानता की स्थिति कही है अष्टदशम तरंग में आलस्य आदि दोष कहे है एक्रोनविशवे तरंग में भक्त के लक्षण कहे है बीसमे तरंग में प्रिय तथा भक्ति की रुचि तथा अरुचिका वर्णन है इक्कीसवे तरंग में मनोहर प्रेम के पराक्रम कहयो है बाइसवे तरंग में भक्त के उपकार की विशेषता कही है त्रेबीसमे तरंग में स्नेह और कृपा को पराक्रम कहयो है चौबीसमें तरंग में मुख्य स्वामिनी जी के अत्यन्त सुन्दर गुण कहे है पच्चीसमे तरंग में तो प्रभु के रूपादि में रुची नहीं होय है तामें कारण कहयो है छब्बीसमे तरंग में प्रभुन कुं पुष्टिमार्गीय अत्यन्त उत्कर्ष कहयो है सत्ताइसमे तरंग में दुष्ट जीव की कृतार्थता कही है अट्ठाइसमे तरंग में न्यून तथा दोषवारे भक्त की उत्कर्षता प्रभुन ने वर्णन करी है सो कही है । उनतीसवे तरंग में लोकातीत उत्तम वचन कहयो है । तीसमे तरंग में तो सगरे तरंगन के अर्थ संक्षेप सुं कहे है । श्री कल्याण भट्ट जी कहे है के हे रसिक भक्ता रससुं रंजीत चित्त में श्री गोकुलेश्वर की प्राप्ति कुं सिद्ध करवे वारे मनोहर फलरूप या समग्र कल्लोल कुं धारण करत ही वैसे श्री गोकुलेश प्रभुन कुं प्राप्त करवे वारे मनोहर फलरूप, कि सबन कुं सर्व बांछित दायक तथा सबन के सगरे अनिष्ट कुं निवारण करवे वारी अब आगे जाकुं वर्णन आवेगो ऐसे पन्द्रहमे कल्लोलजी को कानरूप अंजली सुं पान करिये ॥

इति श्रीगोकुलाधीश करुणाबलतो मया अनुदितोयं कल्लोले चतुर्दशो मुदेसतां इति श्रीमदो श्रीमुख श्रीमदुक्ति मुक्तामये चतुर्दश कल्लोले तरंगार्थ निरूपक त्रीस तरंग सम्पूर्ण ॥३०॥

॥ इति श्रीमद् गोकुलेश सुधासिंधौ श्रीमदुक्ति मुक्तामये श्री गोकुलेश श्री कल्याण भट्ट संवादः श्री गोकुलेशावित श्री रमणलाल पार करुणा पात्रेन लोकनाथेन वृजभाषाया मनुदित चतुर्दशः कल्लोल समाप्त श्री गोकुलाशाधीण मस्तुः ॥